सच्ची शिष्यता

विल्यम मॅकडोनल्ड

अनुवादः
सौ. डॉर्थी शरदकान्त

GOSPEL FOR ASIA
PUBLICATIONS
Tiruvalla, Kerala, India

SACHCHI SHISHYATA
Hindi
Translation of the book, 'True Discipleship' by
William MacDonald
ISBN 81 - 7377 - 065 - 4
Copyright 1999 Author
First Impression 1999
Printed in India
Price Rs.56.00

विषय वस्तु

प्राक्कथन..... 5
परिचय..... 7

शिष्यता की शर्तें..... 9

सर्वस्व परित्याग..... 15
शिष्यता के लिये रुकावटें..... 25
शिष्य भण्डारी है..... 31
जोश..... 37
विश्वास..... 45
प्रार्थना..... 53
युद्धनीति..... 61
संसार पर प्रभुता..... 69
शिष्यता और विवाह..... 79
मूल्य आँकना..... 85
शहादत की छाया..... 91
सच्ची शिष्यता का प्रतिफल..... 95

आपका धन कहाँ है?..... 99

आपका धन कहाँ है?..... 101
व्यापार में तत्पर..... 103
धन रखना, परंतु उसका मोह न रखना..... 107
उसमें हानि क्या है?..... 111
अपसंचित परिसंपत्ति..... 121

बाइबल क्या कहती है?..... 133
आलसी व्यक्ति को चेतावनी..... 141
दूसरों का न्याय करने के विरोध में चेतावनी..... 143
निष्कर्ष..... 145

प्रभु, मुझे तोड़!..... 147

भूमिका..... 149
परमेश्वर टूटी हुई वस्तुओं को मूल्यवान जानता है... 151
परिवर्तन : टूटे हुए हृदय का एक पहलू 153
टूटे हुए हृदय के मूलतत्व 155
टूटे हुए मन का क्या अभिप्राय नहीं है..... 167
दो पीढ़ियों के बीच दरार..... 169
वैवाहिक जीवन में मतभेद..... 173
परमेश्वर चाहता है कि हम सब उसके सामने
टूट जायें..... 177
परिणामों पर विचार करें..... 179
प्रभु, मुझे तोड़..... 181

प्राक्कथन

इस पुस्तक में नये नियमानुसार शिष्यता के सिद्धांतों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। हम में से कुछ लोग इन सिद्धांतों को बाइबल में कई वर्षों से देखते आ रहे हैं। परंतु अंत में, उनकी यह धारणा हुई कि वर्तमान समय में हम जिस उलझन भरे युग में जी रहे हैं, उस युग में यह नियम अव्यावहारिक एवम् असाध्य प्रतीत होते है। और इस तरह हम उस ठण्ड़े आत्मिक वातावरण के सन्मुख आत्मसमर्पण कर बैठते हैं।

तत्पश्चात, हम एक युवा विश्वासियों के समूह से मिलते हैं जो अपने जीवन के द्वारा यह प्रमाणित करना चाहते हैं कि उद्धारकर्ता द्वारा प्रस्तुत की गयी शिष्यता की शर्तें न केवल व्यावहारिक सिद्ध हुई हैं, बल्कि उन्हीं के माध्यम से संसार में सुसमाचार का कार्य संभव है।

मैं इन जवानों का आभारी हूँ कि उन्होने इस पुस्तक में प्रस्तुत कई सत्यों को अपने जीवित उदाहरण के द्वारा प्रमाणित किया।

यद्यपि यह सत्य हमारे व्यक्तिगत अनुभव से परे हैं, फिर भी हम उन्हें अपने हृदय की प्रबल इच्छा के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

--विल्यम मॅकडोनल्ड

परिचय

सच्ची शिष्यता का मार्ग तब आरम्भ होता है जब एक मसीही व्यक्ति नया जन्म प्राप्त करता है। इसका आरम्भ तब होता है जब निम्नलिखित बातें उसके जीवन में घटती हैं :

(1) जब व्यक्ति इस बात का अनुभव करता है कि वह पापी, खोया हुआ, अंधा और परमेश्वर के सामने नंगा है।

(2) वह जब मान लेता है कि वह अपने अच्छे चरित्र के द्वारा और अच्छे कामों के द्वारा अपना उद्धार नहीं कर सकता।

(3) जब वह विश्वास करता है कि प्रभु यीशु ख्रीष्ट उसके बदले में क्रूस पर मर गया।

(4) जब विश्वास का दृढ निर्णय लेकर वह यह बात कबूल करता है कि यीशु ही उसका प्रभु और उद्धारकर्ता है।

इस तरह एक व्यक्ति मसीही बनता है। यह महत्वपूर्ण है कि आरम्भ में इस बात पर बल दिया जाए। कई लोग सोचते हैं कि मसीही जीवन जीने के द्वारा हम मसीही बन जाते हैं। कतई नहीं! मसीही जीवन जीने से पहले हमें मसीही बनना हैं।

निम्नलिखित पृष्ठों में रेखांकित किया गया मसीही शिष्यता का जीवन अलौकिक सामर्थ्य का जीवन है। हम अपनी सामर्थ्य से यह जीवन जी नहीं सकते। हमें ईश्वरीय सामर्थ्य की आवश्यकता हैं। नया जन्म पाने के बाद ही हम यीशु की शिक्षा के अनुसार जीवन व्यतीत करने की शक्ति पाते हैं।

आगे बढ़ने से पहले, हम स्वयम् से प्रश्न करें, "क्या मैंने नया जन्म पाया है ? क्या मैं प्रभु यीशु पर विश्वास करने के द्वारा परमेश्वर की संतान बन गया हूँ ?"

यदि नहीं , तो आज ही उसे अपना प्रभु और उद्धारकर्ता स्वीकार कीजिये। फिर जो कुछ उसने आज्ञा दी है उसके अनुसार उसका पालन करने का निर्णय लीजिये, भले ही उसका मूल्य कुछ भी क्यों न चुकाना पडे। --विल्यम मॅकडोनल्ड

शिष्यता की शर्तें

सच्ची शिष्यता का अर्थ प्रभु ख्रीष्ट के प्रति समूचा समर्पण है।

उध्दारकर्ता ऐसे स्त्री एवम् पुरुषों की खोज में नहीं है जो अपनी शाम का बचा हुआ समय–अथवा सप्ताह के अंतिम दिन–अथवा अवकाश प्राप्त जीवनकाल के बचे हुए वर्ष उसे दे दें। बल्कि वह ऐसे लोगों को चाहता है जो अपने जीवन में उसे प्रथम स्थान दे सकें। "वह आज भी खोजता है, खोजता आया है, ऐसी भीड़ को नहीं जो निरुद्देश्य उसके पीछे चली आ रही है, परंतु व्यक्तिगत रुप से ऐसे स्त्री एवम् पुरुषों को जिन्होंने यह जानकर उस पर विश्वास किया हैं कि वह ऐसे लोगों को चाहता है जो आत्मत्याग के उस मार्ग पर चलें जिस मार्ग से वह स्वयम् उनसे पहले चलता गया" –एच. ए. ईव्हान हापकिन्स।

हमारा समर्पण ही उसने कलवरी क्रूस पर जो बलिदान किया है उसके लिये उचित अनुक्रिया है। इतना अद्‌भुत, इतना ईश्वरीय प्रेम हमारी आत्मा, हमारा जीवन, हमारा सर्वस्व पाये बिना कैसे संतोष पाता! प्रभु यीशु ने जो उसके शिष्य बनना चाहते हैं उनके सामने बड़ी ही कठोर माँगें रखी है–ऐसी माँगें जो इन विलासितापूर्ण दिनों में पूर्णतया दुर्लक्षित की जा रही हैं। कई बार हम मसीही जीवन को नरक

से बचाव पाने का एक मार्ग और स्वर्ग में प्रवेश पाने का गारन्टी पत्र (प्रत्याभूति पत्र) मान लेते हैं। इतना ही नहीं, इस जीवन में प्राप्त होने वाले उत्तम भाग का आनंद उठाने का पूर्ण अधिकार हम ने पाया हैं ऐसा हम सोचने लगते हैं। हम जानते हैं कि बाइबल में शिष्यता से संबंधित सारे ही कठिन एवम् कठोर वचन हैं, परंतु मसीहीयत के विषय में हमारी जो कल्पनाएँ हैं उनसे उनका मेला होना हमें मुश्किल प्रतीत होता हैं।

सिपाही अपना जीवन अपनी मातृभूमि के लिये कुरबान कर देते हैं इस बात को हम स्वीकार कर लेते हैं। साम्यवादी विचारों का अनुपालन करने वाले राजनीतिक कारणों के लिये अपना जीवन समर्पित कर देते हैं, यह बात हमें अजीब नहीं जान पडती। परंतु खीष्ट के पीछे चलने वाले व्यक्ति के जीवन में "खून, पसीना और आँसु" हो यह विचार ही हमें पराया प्रतीत होता है, हमारी समझ से बाहर होता है।

परंतु प्रभु यीशु खीष्ट के वचन स्पष्ट हैं। यदि हम उन्हें ज्यों का त्यों ग्रहण कर लें तो गलतफहमी के लिये उसमें कोई स्थान नहीं। संसार के तारणहार ने शिष्यता की कुछ शर्तें यहाँ प्रस्तुत की है।

1. प्रभु यीशु मसीह के लिये बेपनाह प्रेम

"यदि कोई मेरे पास आए और अपने माता और पिता और पत्नी और लड़केबालों और भाईयों और बहनों, बरन अपने प्राण को भी अप्रिय न जानें, तो वह मेरा चेला नहीं हो सकता"(लूका 14:26)। इसका अर्थ यह नहीं कि हम अपने सगे–संबंधियों से शत्रुता रखें, उनके प्रति द्वेष रखें, परंतु इसका मतलब यह है कि प्रभु यीशु मसीह के लिये हमारे हृदय में इतना अधिक प्रेम हो कि उसकी तुलना में लोगों के प्रति हमारा प्रेम निम्न स्तर का प्रतीत हो। "बरन् अपने प्राण को भी" यह इस वचन का सब से कठिन अंश है। खुद के प्रति प्रेम शिष्यता के लिये सब से बडी रुकावट का कारण है। जब तक हम अपने जीवन को उसके लिये त्याग देने हेतु तैयार नहीं होते, तब तक जिस स्थान में वह हमें देखना चाहता है उस स्थान तक हम नहीं पहुँच पाते।

2. खुद का इन्कार

"यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे, तो अपने आप का इन्कार करें..."(मत्ती 16:24)। खुद का इन्कार करना और आत्मनिग्रह दोनों भिन्न अर्थ के शब्द हैं। आत्मनिग्रह का अर्थ चैन–विलास अथवा धन–सम्पत्ति अथवा प्रिय भोजनवस्तु का त्याग करना। खुद का इन्कार करने का अर्थ है कि प्रभु यीशु खीष्ट की प्रभुता के आगे पूर्ण रुप से समर्पित हो जाना, यहाँ तक की "स्व" के पास कोई अधिकार न रहें। इसका तात्पर्य है "स्व" के द्वारा पद त्याग करना। हेन्री मार्टीन कहते हैं, "हे प्रभु, मेरी अपनी कोई इच्छा बाकी न रहें, न ही बाहरी तौर से मुझ पर बीतने वाली बातों पर मैं अपनी खुशी के लिये निर्भर रहूँ, परंतु तेरी इच्छा के अनुरुप स्वयं को अनुकूल करूँ।"

मेरा महिमामय राजकुमार जयवंत
मेरे इन समर्पित हाथों को थाम लें,
ताकि मेरी इच्छा तेरी इच्छा हो,
उस तारणकर्ता की खुशहाल प्रजा बनें।
–एच. जी. सी. मौल

3. क्रूस का विवेकपूर्ण चुनाव

"यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे, तो अपने आप का इन्कार करें और अपना क्रूस उठाए..."(मत्ती 16:24)। क्रूस किसी शारीरिक दुर्बलता का अथवा मानसिक वेदना का प्रतीक नहीं है, मनुष्य के लिये यह बातें आम हैं। क्रूस विचारपूर्वक चुना हुआ जीवन मार्ग है। और "इस संसार में यह अनादर एवम् निन्दा का मार्ग है"–सी. ए. कोट्स। क्रूस लज्जा, सताव, और अपमान को दर्शाता है जिसे संसार ने परमेश्वर के पुत्र पर लादा था, और उन सभी लोगों को जो प्रचलित प्रथाओं के विरोध में चलते हैं, उसका सामना करना पड़ेगा। वह विश्वासी जो क्रूस को टालना चाहता है, वह इस संसार के सदृश बनकर तथा उसके मार्गों के अनुरुप चलकर ऐसा कर सकता है।

4. मसीह के पीछे चलते हुए जीवन बिताना

"यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे, तो अपने आप का इन्कार करें और अपना क्रूस उठाए" (मत्ती 16:24) । इस वचन का अर्थ समझने हेतु हमें अपने आप से पूछना होगा, "प्रभु यीशु के जीवन की विशेषता क्या थी ?" उसका जीवन परमेश्वर की इच्छा के अधीन था। उसका जीवन पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से परिपूर्ण था। उस जीवन में अन्य लोगों के लिये निःस्वार्थ सेवा का भाव था। घोर अन्याय के बीच वह धीरज एवम् सहनशीलता का जीवन था । वह उमंग और उत्साह का, व्यय का, त्याग का, आत्म–संयम का, दीनता का, नम्रता का ,दयालुता का, विश्वासयोग्यता एवम् भक्ति का जीवन था (गलतियों 5:22–23)। उसके शिष्य बनने के लिये हमें वैसे ही चलना होगा जैसे वह चला। मसीह की समानता का फल दिखाना होगा (यूहन्ना 15:8)।

5. प्रभु यीशु के लोगों के विषय में बेपनाह प्यार

"यदि आपस में प्रेम रखोगे तो इसी से सब जानेंगे, कि तुम मेरे चेले हो" (यूहन्ना 13:35)। यह प्रेम दूसरों को खुद से भला समझता है। यह प्रेम अनगिनत पापों को ढ़ांप देता है, यह प्रेम धीरजवंत है, कृपाल है, यह प्रेम अपनी बढ़ाई नहीं करता, फूलता नहीं। वह अनरीति नहीं चलता, वह अपनी भलाई नहीं चाहता, झुंझलाता नहीं, बुरा नहीं मानता। कुकर्म से आनन्दित नहीं होता, परंतु सत्य से आनन्दित होता है। वह सब बातें सह लेता है, सब बातों की प्रतीति करता है, सब बातों की आशा रखता है, सब बातों में धीरज धरता है (कुरिन्थियों 13:4–7)। इस प्रेम के अभाव में हमारी शिष्यता मात्र उदासीन एवम् निष्क्रिय वैराग्य है।

6. उसके वचन में अटल बनें रहना

"यदि तुम मेरे वचन में बने रहोगे, तो सचमुच मेरे चेले ठहरोगे" (यूहन्ना 8:31)। सच्ची शिष्यता के लिये उसमें बने रहना आवश्यक है।

भली–भाँति आरम्भ करना, महिमा के साथ चमक उठना आसान है, परंतु अन्त तक बनें रहना ही सच्चाई की कसौटी है। जो कोई अपना हाथ हल पर रखकर पीछे देखता है, वह परमेश्वर के राज्य के योग्य नहीं (लूका 9:62)। परमेश्वर के वचन का आवेशपूर्ण अनुपालन पर्याप्त नहीं है। प्रभु ख्रीष्ट उन लोगों को चाहता है जो उसके आज्ञापालन में निस्संदेह एवम् अटल बनें रहेंगे।

मुझे पीछे न हटने देना,
मेरे हल की मूठ आँसुओं से भीगी है,
मेरे अवजारों मे जंग चढी है, फिर भी।
मेरे प्रभु ! मेरे ईश्वर! मुझे पीछे न हटने दे।

7. सब कुछ त्याग कर उसके पीछे हो लेना ।

"इसी रीति से तुम में से जो कोई अपना सब कुछ त्याग न दें, तो वह मेरा चेला नहीं हो सकता" (लूका 14:33)। शायद यह शिष्यता की सर्वाधिक अप्रिय शर्त है और शायद बायबल का सब से अप्रिय वचन सिध्द हो। जैसा लिखा है वैसा इस वचन का अर्थ नहीं है, ऐसा कह कर धर्म के पंड़ित उसके कई कारण प्रस्तुत कर सकते हैं, परंतु एक साधारण शिष्य उसे सहज ही ग्रहण कर सकता है, यह कहते हुए कि यीशु जानता था वह क्या कह रहा है। सर्वस्व त्याग का अर्थ क्या है? सर्वस्व त्याग का अर्थ है अपनी अनावश्यक धन–सम्पत्ति त्याग देना, जिसे अन्यथा सुसमाचार की सेवा में लगाया जा सकता है। जो अपना सब कुछ त्याग देता है वह अकार्यक्षम, निकम्मा नहीं बन जाता, वह अपनी तथा अपने परिवार की वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये परिश्रम करता है। क्योंकि परमेश्वर के कार्य को आगे बढ़ाना ही उसकी प्रधान इच्छा है, इसलिये वह अपनी आवश्यकता से अधिक जो कुछ पाता है, वह परमेश्वर की सेवा में लगा देता है और अपने भविष्य को परमेश्वर के हाथों में छोड़ देता है। परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज को प्रधान महत्व देने के कारण वह विश्वास करता

है कि उसे भोजन और वस्त्र का कभी अभाव न होगा। सुसमाचार के अभाव में कई आत्माएँ नाश हो रही हैं। इस स्थिति में वह जान बूझ कर अनावश्यक धन संचय नहीं करता। वह धन संचय करने में अपने जीवन को व्यर्थ गँवाना नहीं चाहता, क्योंकि जब यीशु अपने संतों के साथ आयेगा तब यह धन शैतान के हाथों में जायेगा। वह परमेंश्वर की आज्ञा का पालन करना चाहता है। जब वह अपने सर्वस्व का त्याग करता है तब वह सब कुछ जो वह रखना नहीं चाहता, जिस से वह मन लगाना नहीं चाहता उसे वह त्याग देता है।

मसीही शिष्यता की यह सात शर्तें है। यह शर्तें स्पष्ट एवम् असन्दिग्धार्थक है। लेखक यह जानता है कि इन शर्तों को आपके आगे रखते हुए वह खुद को निकम्मा दास कहलाता हैं। परंतु क्या परमेश्वर के लोग यदि चूक जाएं, तो क्या परमेश्वर का सत्य छिपा रहेगा? संदेश हमेशा ही संदेश देने वाले से श्रेष्ठ है ? क्या यह योग्य नहीं कि परमेश्वर सत्य और हरेक मनुष्य झूठा ठहरे ? क्या हम एक प्राचीन सेवक के साथ यह कह सकते हैं, "मेरे विनाश में भी तेरी इच्छा पूरी हो।"

अपने पिछले पापों को कबूल करते हुए प्रभु यीशु के सम्मुख आयें और उसके अधीन होकर उस गौरवशाली प्रभु यीशु की सच्ची शिष्यता की खोज में लग जायें।

मेरे स्वामी, मुझे अपने द्वार तक ले चल,
मेरे कानों को फिर एक बार छेद दे,
तेरे बंधन मेरे लिये स्वतंत्रता है,
मुझे रहने दे तेरे साथ,
ताकि तेरे लिये मैं परिश्रम करुँ,
तुझ में बना रहूँ अटल,
तेरी आज्ञाओं को मानूँ ।

—एच. जी. सी. मौल

सर्वस्व परित्याग

"इसी रीति से तुम में से जो कोई अपना सब कुछ त्याग न दें, तो वह मेरा चेला नहीं हो सकता" (लूका 14:33)।

जो कोई प्रभु यीशु मसीह का शिष्य बनना चाहता है, उसे अपना सर्वस्व त्यागने की आवश्यकता है। यही इन वचनों का स्पष्ट अर्थ है। हम इन शर्तों का भले ही कितना विरोध करें, इन असम्भव बातों के विरोध में चाहे जितना आक्रोश करें, सत्य तो यह है कि यह परमेश्वर का वचन है, और जो वह कहना चाहता है, उसका अर्थ स्पष्ट है।

आरम्भ ही में, हमें निम्नलिखित अटल सच्चाईयों का सामना करना होगा :

(अ) प्रभु यीशु ने मसीही सेवकों के किसी विशेष वर्ग से यह माँग नहीं की, उसनें कहा, "तुम में से जो कोई..."

(ब) उसने यह नहीं कहा कि हमें अपना सर्वस्व त्यागने हेतु तैयार रहना हैं, उसने कहा, "जो कोई अपना सब कुछ त्याग न दें..."

(क) उसने यह भी न कहा कि हम अपने धन में से कुछ अंश त्याग दें, उसने कहा, "तुम में से जो कोई अपना सब कुछ त्याग न दें, तो वह..."

(ड) उसने यह नहीं कहा कि जो मनुष्य अपनी दौलत को थामें रहता है उसके लिए मसीहियत का तरल स्वरुप संभव है। उसने कहा, "वह मेरा चेला नहीं हो सकता।"

वास्तव में, हमें इस बात को लेकर आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं हैं, क्योकि बाइबल का यही एक मात्र सुझाव नहीं है।

क्या प्रभु यीशु ने यह नहीं कहा :

"अपने लिए पृथ्वी पर धन इकट्ठा न करो; जहाँ कीड़ा और काई बिगाडते हैं, और जहाँ चोर सेंध लगाते और चुराते हैं..." (मत्ती 6:19,20)।

वेस्ली ने ठीक ही कहा है, "प्रभु यीशु ने इस पृथ्वी पर धन इकट्ठा करने से मना किया है। उसने इस पाप को व्यभिचार और हत्या के समान माना है।"

क्या यीशु ने यह नहीं कहा :

"अपनी संपत्ति बेचकर दान कर दो..." (लूका 12:33)?

क्या उसने उस जवान और धनी सरदार से यह नहीं कहा:

"...अपना सब कुछ बेचकर कंगालों को बाट दे, और तुझे स्वर्ग में धन मिलेगा, और आकर मेरे पीछे हो ले..." (लूका 18:22)?

यदि उसके कथन का अर्थ यह नहीं था, तो वह क्या कहना चाहता था?

पहिली सदी की कलीसिया के विश्वासियों के लिए क्या यह सत्य सिद्ध नहीं होता है कि "वे अपनी अपनी सम्पत्ति और सामान बेच बेचकर जैसी जिस की आवश्यकता होती थी बांट दिया करते थे" (प्रेरितों के काम 2:45)।

उसी तरह पिछले कई सदियों में परमेश्वर के संतों ने प्रभु यीशु के पीछे चलने हेतु अपना सब कुछ त्याग दिया।

एँथनी नॉरिस ग्रोव्हज् और उनकी पत्नी बगदाद के पहले मिशनरी थे, उन्होंने यह भरोसा कर लिया कि "वे इस पृथ्वी पर धन इकट्ठा नहीं करेंगे, और अपनी सारी आय परमेश्वर की सेवा के लिए

खर्च कर देंगे..." *'क्रिश्चियन डिवोटेडनेस'* नामक पुस्तक में हम इसका वर्णन पाते है।

सी.टी. स्टड ने "अपनी सारी दौलत मसीह को देने का फैसला किया और उस सुअवसर का लाभ उठाने का निश्चय किया जिसे उस धनवान ने खो दिया था। परमेश्वर के लिखित वचनों के पालन ही से वह हो सकता था।" हजारो रुपये परमेश्वर की सेवा के लिए दान कर देने के पश्चात, उसने 9,588 डॉलर की रकम अपनी नई दुल्हन के लिए बचाकर रखी। वह उस पर ज्यादती नहीं करना चाहता था। "चार्ली, प्रभु यीशु ने उस धनवान पुरुष से क्या कहा ?" उसकी पत्नी ने पूछा।

"सब कुछ बेच दो," वह बोल उठा।

"अपने विवाह के दिन से ही हम प्रभु के सामने अपना व्यवहार साफ रखेंगे"। और वह सारा धन मसीही मिशनरियों को दिया गया।

इसी समर्पण भाव ने जिम इलियट को प्रोत्साहित किया। उसने अपनी डायरी में लिखा है:

"हे पिता, मुझे निर्बल बनें रहने दे, ताकि मैं इस पृथ्वी पर की वस्तुओं को थामे न रह सकूँ। मेरा जीवन, मेरा नाम, मेरा धन इन सब के बन्धनों को मैं त्याग देना चाहता हूँ। हे पिता, मैं सारे लाड प्यार को भी छोड़ना चाहता हूँ। कई बार मैंने अपनी पकड ढ़ीली तो कर दी, परन्तु हर बार मैंने उस इच्छा को अनमोल माना, एक प्यार भरा स्पर्श। मेरे हाथों को खोल दे ताकि मैं उन कीले के घाव को स्वीकार कर लूँ ताकि सब कुछ त्यागते हुए मैं स्वयं भी उण्डेला जाऊँ, और जो कुछ मुझे बाँधे हुए है, उन सब बन्धनों से स्वतंत्र हो जाऊँ। उसने सोचा, स्वर्ग, जी हाँ, परमेश्वर की समानता थामे रहने की चीज नहीं है। इस कारण मैं सब त्याग देना चाहता हूँ।"

परमेश्वर के वचनों को ज्यों का त्यों ग्रहण करना हमारे नास्तिक हृदयों को असंभव प्रतीत होता हैं। यदि हम अपना सर्वस्व त्याग देंगे

तो हम अपना सब कुछ खो बैठेंगे और भूखे मर जाएंगे। हमें अपने तथा अपने प्रियजनों के भविष्य के लिए प्रबन्ध करना हैं। यदि प्रत्येक मसीही व्यक्ति, अपना सर्वस्व त्याग देगा, तो परमेश्वर की सेवकाई के लिये धन देकर कौन सहायता करेगा ? यदि कुछ धनवान मसीही न रहे तो समाज के सम्पन्न वर्गों को सुसमाचार कौन देगा ? इस तरह के वादविवाद हमारे मनों में चलते रहते हैं–और सभी ये विवाद सिद्ध करना चाहते हैं कि प्रभु यीशु के वचन का यह अर्थ नहीं था।

सत्य तो यह है कि परमेश्वर के वचन का पालन करना बुद्धिमानी एवम् न्यायसंगत जीवन का प्रतीक है, और इसी के द्वारा हम दुनिया का सर्वाधिक आनंद प्राप्त करते हैं। वचन की गवाही एवम् अनुभव इस बात को प्रमाणित करते हैं कि ख्रीष्ट के लिए जो समर्पित जीवन व्यतीत करते है, उन्हें किसी वस्तु का अभाव न होगा। जो व्यक्ति परमेश्वर की आज्ञा का पालन करता है, परमेश्वर उसका ध्यान रखता है।

जो व्यक्ति प्रभु यीशु मसीह के पीछे हो लेने हेतु अपना सर्वस्व त्याग देता है, वह व्यक्ति अकर्मण्य, निष्क्रिय भिखारी नहीं है जो अपने मसीही सहयोगियों से धन की अपेक्षा रखें।

(1) वह परिश्रमी है। अपने परिवार के वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह परिश्रम करता है।

(2) वह अल्पव्ययी है। जहाँ तक हो सके वह अपने धन का व्यय सावधानी से करता है, ताकि अपनी आवश्यकताओं को वह प्रभु के हाथों में सौंप सके।

(3) वह दूरदर्शी है। पृथ्वी पर धन इकट्ठा करने के बजाय वह स्वर्ग में अपना धन संग्रहित करता है।

(4) भविष्य के लिए वह परमेश्वर पर निर्भर रहता है। बुढ़ापे की सुरक्षा के लिए अपार धन इकट्ठा करने के बजाय वह अपने जीवन क अनमोल समय को प्रभु यीशु की सेवा के लिए अर्पित करता है और

भविष्य के लिए परमेश्वर पर विश्वास रखता है। वह विश्वास करता है कि यदि वह परमेश्वर के राज्य और उसके धर्म की खोज करें तो उसे सभी वस्तुएँ प्राप्त होगी (मत्ती 6:33)।

वर्षा के दिन के लिए उसे धन का संग्रह करना अयोग्य जान पडता है। वह विवाद प्रस्तुत करता है:

(1) वर्तमान समय में यदि हम अपने धन का उपयोग आत्माओं के उद्धार के लिए कर सकते हैं, तो हम आज अपने धन का व्यर्थ ही संचय क्यों करें? "...पर जिस किसी के पास संसार की संपत्ति हो और वह अपने भाई को कंगाल देखकर उस पर तरस खाना न चाहे, तो उस में परमेश्वर का प्रेम क्यों कर बना रह सकता है ?" (यूहन्ना 3:17)

"उस महत्वपूर्ण आदेश पर हम विचार करें–अपने पड़ोसी से अपने ही समान प्रेम करना" (लैव्यव्यवस्था 19:18)। क्या यह सच्चाई के साथ कहा जा सकता है कि हम अपने पड़ोसी से अपने ही समान प्रेम रखते हैं, जबकि हम उन्हें भूखे मरते हुए देखते हैं और हम स्वयं सम्पन्नता का जीवन व्यतीत करते हैं? क्या मैं उस व्यक्ति से अनुरोध कर सकता हूँ और उससे पूछ सकता हूँ, जिसने परमेश्वर के उस अकथनीय वरदान को जान लेने का आनंद अनुभव किया है–'क्या सौ संसार के लिए आप इस आनंद और ज्ञान का आदान प्रदान करोगे?' सो आईये, हम उन साधनों को अपने ही हाथों में रोककर न रखें जिसके माध्यम से अन्य लोग यह पवित्र ज्ञान तथा स्वर्गीय सांत्वना प्राप्त कर सकेंगे" –ए.एन. ग्रोव्हज

(2) यदि हम वास्तव में विश्वास करते हैं कि प्रभु यीशु का आना निकट है, तो हम अपने धन का उपयोग करना चाहेंगे। अन्यथा, यह धन शैतान के हाथों में जाने का खतरा है–वह धन जिसे अनन्तकालीन आशिष के लिए उपयोग किया जा सकता है।

(3) यदि हम अपने धन को परमेश्वर की सेवा के लिए उपयोग में लाने हेतु तैयार नहीं हैं, तो हम कैसे परमेश्वर से प्रार्थना कर सकते

हैं कि वह मसीही सेवकाई हेतु धन दें। जब हम अपना सर्वस्व प्रभु के लिए त्याग देते हैं, तब हम प्रार्थना में ढ़ोंग नहीं प्रगट कर सकते।

(4) यदि हम जीवन के किसी क्षेत्र में सच्चाई का पालन करने में चूक गये हैं तो हम परमेश्वर के पूर्ण सच्चाई की शिक्षा कैसे दें सकते हैं ? हमारा जीवन हमारे मुँह के शब्दों को मुहर कर देगा।

(5) इस संसार के धूर्त लोगों ने खुद अपने आपके लिए अपार धन संचय कर रखा है। यह विश्वास के द्वारा जीना नहीं हैं, परन्तु देखकर जीना है। मसीही व्यक्ति को परमेश्वर पर निर्भर रहने के लिए बुलाहट दी गई है। यदि वह इस पृथ्वी पर धन इकट्ठा करता है, तो वह इस संसार से और उसके मार्गों से किस तरह भिन्न है ?

हम बारबार यह बहस सुनते हैं कि हमें अपने परिवार के भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करना हैं, अन्यथा हम एक नास्तिक व्यक्ति से भी बुरे कहलाये जायेंगे। निम्नलिखित वचन इस विचार के लिए आधार प्रस्तुत करते हैं :

> लडकेबालों को माता–पिता के लिए धन बटोरना नहीं चाहिये, पर माता–पिता को लड़केबालों के लिए (2 कुरिन्थियों 12:13)।
>
> पर यदि कोई अपनों की और निज करके अपने घराने की चिंता न करें, तो वह विश्वास से मुकर गया है और अविश्वासी से भी बुरा बन गया है (1 तीमुथियुस 5:8)।

इन वचनों का बारीकी से अध्ययन करने के द्वारा यह ज्ञात होता है कि वे ***वर्तमान आवश्यकताओं*** से सम्बद्ध है, न कि भविष्य की ***आकस्मिक घटनाओं*** से।

पहले वचन में पौलुस व्यंग का उपयोग करता है। वह पिता है, और कुरिन्थियों के लोग उसकी सन्तान हैं। और हालाँकि परमेश्वर का सेवक होने के नाते उसे हर तरह से अधिकार था, फिर भी उसने उन पर आर्थिक बोझ न डाला। कुछ भी हो, वह विश्वास में उनका पिता था, और सामान्यतया पिता अपने बच्चों का पालन–पोषण करता है, न

ही बच्चें माता–पिता का। यहाँ प्रश्न माता–पिता के अपने सन्तानों के भविष्य के लिए धन संग्रहित करने का नहीं। यह सम्पूर्ण अंश पौलुस की वर्तमान आवश्यकताओं के प्रबंध का है, न ही भविष्य की संभाव्य जरुरतों का।

तीमुथियुस की पहली पत्री के 5 : 8 में प्रेरित पौलुस गरीब विधवाओं के पोषण की चर्चा कर रहा है। वह इस बात पर बल देता है कि उनके सगे–सम्बंधी उनके पालन–पोषण की जिम्मेदारी रखते हैं। यदि उनके सगे–सम्बंधी न हो, या वे अपना उत्तरदायित्व नहीं निभाना चाहते हैं, तो स्थानिक कलीसिया इन मसीही विधवाओं की सहायता करें। यहाँ भी विषय वर्तमान आवश्यकताओं का हैं, भविष्य की जरुरतों का नहीं।

परमेश्वर की इच्छा यही है कि मसीही की देह के सदस्य अपने मसीही भाई–बहनों की वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करें :

"परन्तु बराबरी के विचार से इस समय तुम्हारी बढ़ती उनकी घटी में काम आए, ताकि उन की बढ़ती भी तुम्हारी घटी में काम आए, कि बराबरी हो जाए। जैसा लिखा है, कि जिस ने बहुत बटोरा उसका कुछ अधिक न निकला, और जिस ने थोड़ा बटोरा उसका कुछ कम न निकला" (2 कुरिन्थियों 8:14–15)।

जो मसीही व्यक्ति यह सोचता है कि उसे अपने भविष्य की जरुरतों का प्रबंध करने की आवश्यकता है, उसके सामने निरन्तर यह समस्या होती है कि कितना धन संग्रहित करना है। इस कारण वह अनिश्चित प्रमाण में धन–सम्पत्ति जुटानें में अपना जीवन व्यतीत कर देता है और अपने जीवन का सर्वोत्तम भाग प्रभु यीशु मसीह को देने के अधिकार से वंचित रह जाता है। अंत में वह अपना जीवन व्यर्थ गँवा देता है और वह जान लेता है कि उसकी आवश्यकताएँ किसी न किसी तरह अवश्य पूरी हो जाती यदि वह अपने उद्धारकर्ता के लिए सम्पूर्ण मन से जीवन बिताता।

यदि सभी मसीही लोग प्रभु यीशु के वचनों को ज्यों का त्यों ग्रहण कर लेते तो, परमेश्वर के कार्य के लिए धन का कभी अभाव न होता। सुसमाचार अधिक सामर्थ्य एवम् प्रचुरता के साथ किया जाता। यदि किसी शिष्य को जरुरत का सामना करना पड़ता तो अन्य शिष्य बड़े आनंद एवम् अधिकार के साथ उसकी सहायता करते।

इस संसार के धन–सम्पन्न लोगों को सुसमाचार देने हेतु धनवान मसीही लोगों की नितान्त आवश्यकता है यह कहना हास्यप्रद है। पौलुस ने कैसर के घराने को उस समय सुसमाचार सुनाया जब वह कैदखाने में था (फिलिप्पियों 4:22)। यदि हम परमेश्वर की आज्ञा का पालन करते हैं, तो वह बाकी बातों का प्रबंध करेगा, इस बात पर हम विश्वास कर सकते हैं।

प्रभु यीशु मसीह का उदाहरण इस विषय में अंतिम है। सेवक अपने स्वामी से श्रेष्ठ नहीं है। "जिस संसार में हमारा प्रभु दरिद्री, दीन और तुच्छ जाना गया था उस संसार में उसका सेवक धन, सम्मान और गौरव की खोज में रहे यह अशोभनीय है"–जार्ज मुल्लर।

"गरीबी यीशु मसीह के दुःखसहन का एक भाग था (2 कुरिन्थियों 8:9)। अर्थात् गरीबी चिथड़ों और गंदगी का नाम नहीं, उसका अर्थ है धन संचय एवं चैनविलास के साधनों का अभाव... कुछ तीस वर्ष पूर्व... एन्ड्रयू मरे ने निर्देशित किया कि यदि प्रभु और उनके प्रेरित वास्तव में गरीब न होते तो जो कार्य वे करना चाहते थे, वे कार्य वे नहीं कर पाते। जो दूसरों को उठाना चाहता है, उसे उस सामरी के समान झुकना होगा और बहुतांशी मानव समुदाय गरीब ही रहा है, और आज भी गरीब है"–ए. एन. ग्रोव्हज्।

लोग यह कह कर अपने पक्ष का समर्थन करते हैं कि घर गृहस्थी के लिए कुछ भौतिक साधनों की जरुरत होती है। यह सत्य है।

लोग यह कर अपनी बातों का समर्थन करते हैं कि मसीही व्यापारियों को अपना व्यापार चलाने हेतु आज पर्याप्त पूंजी की आवश्यकता है। यह सच है।

लोग यह कह कर अपनी बात सिद्ध करना चाहते हैं कि मोटर–गाड़ियों के समान और भी अन्य कुछ भौतिक सुविधाओं की आवश्यकता है जिनका उपयोग परमेश्वर की महिमा के लिए किया जा सकता है। यह भी सत्य है।

परन्तु इन वास्तविक आवश्यकताओं से परे मसीही व्यक्ति को सुसमाचार के प्रसार के लिए मितव्ययी होकर और त्याग भावना के साथ जीवन व्यतीत करना हैं। "मेहनत करो, कम व्यय करो, बहुतायत के साथ दो–और सब कुछ खीष्ट को" यह उसका आदर्श वाक्य हो –ए.एन. ग्रोव्हज।

सब कुछ त्याग देने का अर्थ क्या है इस विषय को लेकर हम में से प्रत्येक जन परमेश्वर के समक्ष जिम्मेदार है। एक विश्वासी दूसरे विश्वासी के लिए कानून नहीं बना सकता। प्रत्येक व्यक्ति को परमेश्वर के सामने अपने ही अभ्यास के अनुसार कार्य करना होगा। यह व्यक्तिगत मामला है।

इस अभ्यास के फलस्वरुप प्रभु विश्वासी के मन में वह समर्पण भाव डालें जिससे वह अब तक अज्ञात था। व्यक्तिगत अहंकार के लिए कोई स्थान नहीं। जो त्याग हम करते हैं, वह कलवरी के बलिदान के प्रकाश में, त्याग नहीं कहलाया जा सकता। इसके अलावा, हम प्रभु को केवल वही देते हैं जो हम रख नहीं पाते और जिससे हमें मोह नहीं रहा है।

"वह मूर्ख नहीं है जो जिसे वह खो नहीं सकता उसे पाने हेतु, जो वह नहीं रख सकता उसे दान कर देता है"–जिम एलियट।

शिष्यता के लिए रुकावटें

जो कोई प्रभु यीशु के पीछे चलना चाहता है उसे इस बात का निश्चय होना चाहिए कि भाग निकलने के कई रास्तें उसके सामने आ खड़े होंगे। उसे पीछे लौट जाने के कई अवसर प्राप्त होंगे। दूसरी आवाजें उसे पुकारती रहेगी।

उसे आत्मत्याग और बलिदान के मार्ग से बचाने हेतु बहुसंख्य दूतों का सैन्यबल उसके सामने खड़ा होगा। निम्नलिखित कहानी में इसका उत्तम उदाहरण दिया गया है, जहाँ वे तीन व्यक्ति जो शिष्य बनना चाहते थे, अन्य आवाजों को प्रभु यीशु मसीह की आवाज से अधिक अग्रस्थान देते हैं :

> जब वे मार्ग में चले जाते थे, तो किसी ने उस से कहा, जहाँ जहाँ तू जाएगा, मैं तेरे पीछे हो लूंगा। यीशु ने उस से कहा लोमड़ियों के भट और आकाश के पक्षियों के बसेरे होते है, पर मनुष्य के पुत्र को सिर धरने की भी जगह नहीं। उस ने दूसरे से कहा, मेरे पीछे हो ले; उसने कहा; हे प्रभु, मुझे पहिले जाने दे कि अपने पिता को गाड़ दूँ। उसने उससे कहा, मरे हुओं को अपने मूरदे गाड़ने दे, पर तू जाकर परमेश्वर के राज्य की कथा सुना। एक और ने भी कहा; हे प्रभु, मैं तेरे पीछे हो लूंगा; पर पहिले मुझे जाने दे कि अपने घर के लोगों से विदा हो जाऊँ। यीशु ने उससे

कहा; जो कोई अपना हाथ हल पर रखकर पीछे देखता है; वह परमेश्वर के राज्य के योग्य नहीं (लूका 1:57–62)।

तीन गुमनाम व्यक्ति प्रभु यीशु के सामने आये। उसके पीछे हो लेने की आंतरिक इच्छा उनके मन में उत्पन्न हुई। परन्तु उन्होंने पूर्ण समर्पण और अपनी आत्मा इनके बीच अन्य किसी रुकावट को आने की अनुमति नहीं दी।

श्रीमान अतिशीघ्र

प्रथम व्यक्ति को श्रीमान अतिशीघ्र कहा गया है। बड़े उत्साह के साथ उसने प्रभु यीशु के पीछे चलने की इच्छा प्रगट की। "जहाँ जहाँ तू जाएगा, मैं तेरे पीछे हो लूंगा।" कोई भी मूल्य उसके लिए अधिक न होगा। कोई भी क्रूस अधिक भारी न होगा। कोई भी मार्ग ज्यादा कठिन न होगा।

श्रीमान अतिशीघ्र ने जो इच्छा व्यक्त की उसमें और प्रभु यीशु मसीह के उत्तर में प्रथमतः कोई सम्बन्ध दिखाई नहीं देता। यीशु ने कहा, "लोमड़ियों के भट और आकाश के पक्षियों के बसेरे होते है, पर मनुष्य के पुत्र को सिर धरने की भी जगह नहीं।" वास्तव में प्रभु यीशु मसीह का उत्तर एकदम उचित था, मानों वह कहना चाहता था "मैं जहाँ जाऊँ वहाँ आने का दावा आपने किया हैं, परन्तु क्या तुम भौतिक सुविधाओं को त्यागने तैयार हो। मुझसे अधिक इन लोमड़ियों को इस संसार की सुविधायें प्राप्त हुई हैं। पक्षियों के पास घोसलें हैं जिन्हें वे अपना कह सकते हैं। परंतु मैं इस संसार में जिसे मैने अपने हाथों से बनाया है, एक बेघर भटकता हुआ मनुष्य हूँ ? क्या मेरे पीछे होने के लिए आप अपने घर की सुरक्षा त्यागने हेतु तैयार हो? पूर्ण हृदय से मेरी सेवा करने के लिए तुम जीवन की वास्तविक विलासिताएँ त्यागने हेतु तैयार हो ?

वह व्यक्ति तैयार नहीं था यह स्पष्ट है क्योंकि हम पवित्र बाईबल में उसके विषय में आगे नहीं पढ़ते। प्रभु यीशु मसीह के प्रति

समर्पण से अधिक उसे संसार की सुख–सुविधाओं से प्रेम था।

श्रीमान अतिमंद

दूसरे व्यक्ति को श्रीमान अतिमंद कहा गया है। उसने स्वयं अपनी इच्छा से पहले व्यक्ति के समान प्रभु यीशु के पीछे जाना नहीं चाहा, परन्तु प्रभु यीशु ने उसे अपने पीछे हो लेने को कहा। उसने सर्वथा इन्कार नहीं किया। ऐसा नहीं था कि वह पूर्ण रुप से प्रभु के विषय में निरपेक्ष था। परन्तु वह पहिले कुछ और करना चाहता था, और यही उसका सबसे बड़ा पाप रहा। उसने प्रभु के अधिकारों से अधिक अपने अधिकारों को अहम् स्थान दिया। उसके जवाब पर ध्यान दीजिए, "हे प्रभु, मुझे पहिले जाने दे कि अपने पिता को गाड़ दूँ।"

यह पूर्ण रुप से योग्य है कि कोई अपने माता–पिता का उचित सम्मान करें। और पिता की मृत्यु होती है तो यह निश्चित ही हमारे मसीही मर्यादा के अन्तर्गत आता है कि अन्त्येष्टि क्रिया को सादर सम्पन्न किया जाए।

परन्तु जब हमारे जीवन की वास्तविक सभ्यताओं को प्रभु यीशु की बातों से अधिक महत्व दिया जाए, तो यह निश्चित ही पाप माना जायेगा। इस व्यक्ति के स्पष्ट उत्तर के द्वारा इस व्यक्ति के जीवन की सच्ची महत्वाकांक्षा प्रगट हुई, "प्रभु...मुझे पहिले...।" दूसरे शब्द मात्र धोखा थे जिनके पीछे अपने 'स्व' को प्रधानता देने का भाव छिपा था।

वह यह नहीं समझ पाया कि उसके शब्द, "प्रभु... मुझे पहिले" नैतिक दृष्टि से हास्यप्रद एवम् असम्भव है। यदि ख्रीष्ट प्रभु है तो प्रथम स्थान उसे दिया जाना चाहिये। यदि पुरुषवाचक सर्वनाम "मैं" सिंहासन पर विराजमान है, तो इसका अर्थ वहाँ ख्रीष्ट का नियंत्रण और अधिकार नहीं है।

श्रीमान अतिमंद को एक कार्य पूरा करना था, और यह कार्य उसे पहले पूरा करना था। और इसलिए यीशु ने उसे ठीक ही कहा, "मरे हुओं को अपने मुरदे गाड़ने दे, पर तू जाकर परमेश्वर के राज्य

की कथा सुना।" हम उसके शब्दों की व्याख्या इस तरह कर सकते हैं : "ऐसी कई बातें हैं जो विश्वासी के समान आत्मिक दृष्टि से मृत व्यक्ति भी भली भाँति कर सकता है। परन्तु ऐसी कुछ बातें हैं जिसे करना विश्वासी के लिए संभव है। जो कार्य एक अविश्वासी व्यक्ति भी कर सकता है उसे करने में अपना जीवन मत गँवा। जो आत्मिक दृष्टि से मृत है उसे भौतिक रुप से मरे हुओं को गाड़ने दे। परन्तु तेरी परम आवश्यकता है। तेरे जीवन का मुख्य लक्ष्य मेरे कार्य को इस पृथ्वी पर बढ़ाना हो।" शायद श्रीमान अतिमंद को यह कींमत बहुत जान पड़ी, वह समय के रंगमंच से हमेशा के लिए लुप्त हो गया।

पहले व्यक्ति के लिए भौतिक सुख सुविधायें रुकावट बनकर खड़ी थी, दूसरे व्यक्ति के लिए उसका कर्तव्य तथा उसका व्यवसाय मसीही उद्देश्यों से बढ़कर था। सांसारिक नौकरी करना गलत नहीं है, परमेश्वर चाहता है कि मनुष्य अपने एवम् अपने परिवार की जरुरतों को पूरा करने के लिए परिश्रम करें। परन्तु सच्ची शिष्यता का जीवन यह दावा करता है कि परमेश्वर का राज्य और उसकी धार्मिकता पहले खोजी जाए; एक विश्वासी को अपने जीवन को वह कार्य करने में व्यतीत नहीं करना चाहिए जिसे उद्धार न पाया हुआ व्यक्ति भी कर सकता है, बल्कि उससे भी बढ़कर। हमारी नौकरी अथवा व्यवसाय का मूल उद्देश केवल हमारी वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करना है, जबकि मसीही व्यक्ति का प्रधान कार्य उसके, परमेश्वर के राज्य का प्रचार करना है।

श्रीमान अति निश्चिंत

तीसरे व्यक्ति को श्रीमान अति निश्चिंत यह संज्ञा दी जाती है। पहले व्यक्ति के समान, उसने प्रभु के पीछे हो लेने की इच्छा प्रगट की। परन्तु दूसरे व्यक्ति के समान उसने उन्हीं असंगत शब्दों का प्रयोग किया, "प्रभु...मुझे प्रथम...।" उसने कहा, "हे प्रभु, मैं तेरे पीछे हो

लूंगा; परंतु पहिले मुझे जाने दे कि अपने घर के लोगों से विदा हो आऊँ।"

पुनः हमें इस बात से सहमत होना होगा कि इस बिनती में अपने आप में कुछ भी गलत नहीं था। अपने प्रियजनों के प्रति प्रेम प्रगट करना अथवा उनसे बिदाई लेते हुए शिष्टाचार के नियमों का पालन करना परमेश्वर के वचन के विपरीत नहीं है। फिर यह व्यक्ति किस आशय से अपनी कसौटी में असफल रहा? बात यह थी–उसने अपने रिश्तों के नाजुक बंधनों को खीष्ट से ऊँचा स्थान दिया।

सो अपनी सुक्ष्म अन्तर्दृष्टि के द्वारा, प्रभु यीशु उससे कहते हैं, "जो कोई अपना हाथ हल पर रखकर पीछे देखता है, वह परमेश्वर के राज्य के योग्य नहीं।" दूसरे शब्दों में, "जिस तरह के आत्म केंद्रित एवम् अदृढ़ मनोवृत्ति का प्रदर्शन तूने किया है, उस तरह के व्यवहार की मैं अपने शिष्यों से अपेक्षा नहीं रखता। मैं केवल उन्हीं को चाहता हूँ जो अपने पारिवारिक बंधनों को छोड़ने के लिए तैयार हैं, जो अपने भावुक संबंधियों के द्वारा विचलित नहीं होते, जो अपने जीवन में उसे सर्वोच्च स्थान देते हैं।

हम यह सोचने पर विवश हो जाते हैं कि श्रीमान अति निश्चित प्रभु यीशु को छोड़कर उदास होकर अपनी राह चल पड़ा। शिष्य बनने की उसकी सारी मनोकामनायें पारिवारिक बंधनों की चट्टान से टकराकर चूर हो गयी। शायद उसकी माता ने उसे रोते हुए कहा था, "यदि तू हमें छोड़कर मिशन क्षेत्र में चला जायेगा तो तू अपनी माता के दिल पर चोट पहुँचाएगा।" हम यह नहीं जानते। हम मात्र यह जानते हैं कि बाइबल इस बुझदिल व्यक्ति का नाम नहीं देती है जिसने, पीछे मुड़कर अपने जीवन के उस सर्वोत्तम अवसर को खो दिया और सदाकाल के लिए, "परमेश्वर के राज्य के लिए अयोग्य" यह खिताब हासिल कर लिया।

सारांश

सच्ची शिष्यता के लिए यह तीन बातें मुख्य रुप से रुकावट उत्पन्न करती हैं जिसे इन तीन व्यक्तियों के उदाहरण के माध्यम से स्पष्ट किया गया है, जिन्होंने प्रभु यीशु के साथ चलना पसंद नहीं किया।

श्रीमान अतिशीघ्र–सांसारिक सुखों के प्रति लगाव।

श्रीमान अतिमंद – व्यवसाय एवम् व्यापार को प्रधानता।

श्रीमान अति निश्चिंत–कोमल पारिवारिक बंधनों को प्रमुख स्थान।

प्रभु यीशु आज भी बुलाता है, वह हमेशा बुलाता आया है कि स्त्री और पुरुष वीरता और बलिदान की भावना के साथ उसके पीछे हो ले।

बचाव के रास्ते आज भी उपलब्ध हैं जो हमसे अनुनय करते हैं, "खुद को बचा लो! उससे दूर रहो!"

उसकी आज्ञा मानने वाले बहुत थोड़े हैं।

यीशु, मैंने अपना क्रूस उठा लिया,
सब कुछ छोड़ मैं, तेरे पीछे हो लिया,
नंगा, दीन, तुच्छ, त्यागा हुआ,
इसके आगे तू ही मेरा सब कुछ होगा,
सारी प्रिय इच्छायें मिटती जाती,
जो कुछ चाहा मैंने, जिसकी आशा की, जिसे जाना,
फिर भी मैं कितना धन्य हूँ,
परमेश्वर और स्वर्ग मेरे हैं।

यह संसार मुझे तुच्छ जानें और छोड़ दें,
मेरे उद्धारकर्ता को भी इसने त्यागा;
मानव मन और चेहरें धोखा देते–
तू नहीं उसके समान असत्य;
जब तक तू मुझ पर प्रसन्न है,
हे बुद्धी, प्रेम और सामर्थ के ईश्वर,
शत्रु नफरत करते, मित्र अपना न कहते,
अपने मुख को दर्शा, और सब कुछ रोशन हो।

–एच. एफ. लाइट

शिष्य भण्डारी है

पढ़िए–लूका 16:1–13

अधर्मी भण्डारी का दृष्टान्त शिष्यों से कहा गया था। इस दृष्टान्त में उद्धारकर्ता ने उन सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है जो सभी समय के शिष्यों को लागू हैं। प्रभु यीशु के शिष्य मुख्य रुप से उसके भण्डारी है जिन्हें इस पृथ्वी पर परमेश्वर की सम्पत्ति एवम् कामकाजों का कार्यभार सौंपा गया है।

यह दृष्टान्त कठिनाईयों से परिपूर्ण है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें बेईमानी और टेढ़ेपन की प्रशंसा की गयी है। परन्तु यदि इसे सही ढ़ंग से समझ लिया जाए तो यह दृष्टान्त अति महत्वपूर्ण शिक्षा प्रदान करता है। कहानी संक्षेप में इस प्रकार है। एक धनवान व्यक्ति था जिसने अपने कारोभार को संभालने हेतु एक भण्डारी नियुक्त किया था। कुछ समय पश्चात स्वामी को यह जानकारी मिली कि उसका भण्डारी उसकी सम्पत्ति उड़ाए देता है। उसने तुरन्त उसे बुलाकर अपने कामकाज का लेखा माँगा और यह सूचना दी कि उसे नौकरी से निकाल दिया जाएगा।

भण्डारी ने जान लिया कि उसका भविष्य अन्धकारमय है। कठिन शारीरिक परिश्रम करने की उसकी उम्र नहीं है और भीख मांगने से उसे शर्म आती है। इसलिए उसने युक्ति की, जिसके द्वारा

उसने अपने भविष्य के लिए मित्र बना लिये। उसने अपने स्वामी के देनेदार को बुलाकर कहा, "तुझपर मेरे स्वामी का कितना ऋण है?" उसने कहा, "सौ मन तेल।" उसने कहा, "आधा चुकता कर दे और बाकी मैं काट देता हूँ।" उसने दूसरे ऋणदाता से पूछा, "तुझे कितना देना है?" उसने कहा, "सौ मन गेहूँ।" उसने कहा, "अस्सी अदा कर दे और हम बही–खाता बंद कर देते हैं।"

परन्तु हमें उस अधर्मी भण्डारी के व्यवहार से अधिक आश्चर्य निम्नलिखित कथन से होता हैं :

"स्वामी ने उस अधर्मी भण्डारी को सराहा, कि उसने चतुराई से काम किया है, क्योंकि इस संसार के लोग अपने समय के लोगों के साथ रीति व्यवहारों में ज्योति के लोगों से अधिक चतुर हैं" (वचन 8.)।

हम कारोभार में इस तरह की अप्रामाणिकता की मान्यता को कैसे समझ सकते हैं?

एक बात निश्चित है। न तो उसके स्वामी ने, न ही हमारे प्रभु ने इस दुष्टता की प्रशंसा की है। सर्वप्रथम, इसी कारणवश उसे कारोभार से निकाल दिया गया। कोई भी धर्मी व्यक्ति इस प्रकार की धोखाधड़ी एवम् अविश्वास को मान्यता नहीं देगा। इस दृष्टान्त की शिक्षा भले ही कुछ और हो, परन्तु यहाँ गबन का समर्थन नहीं किया गया है।

केवल एक ही बात के लिए हम उस अधर्मी सेवक को सराहते है–वह यह की उसने अपने भविष्य का प्रबंध किया। अपनी नौकरी से निकाल दिए जाने के बाद भी अपने पास मित्र होंगे इस बात के लिए उसने योजना बनायी। 'अभी' के बदले उस समय के लिये वह क्रियाशील रहा।

यही मुद्दा दृष्टान्त प्रस्तुत करता है। सांसारिक लोग भविष्यकाल के प्रबन्ध के लिए कठोर प्रयास करते हैं। वे अपने बुढ़ापे के लिए, अपने अवकाश–काल के लिए चिन्तित रहते हैं। जिस समय अपनी लाभदायक

नौकरी जारी रखना उनके लिए असम्भव हो जाएगा, उस समय के आराम के लिए वे बड़ी तत्परता के साथ काम में लग जाते हैं। सामाजिक सुरक्षा की खोज में वे हर प्रकार के प्रयास में जुटे रहते हैं।

इसी दृष्टि से, अविश्वासी लोग मसीही लोगों से चतुर सिद्ध होते हैं। परन्तु 'क्यों' का प्रश्न समझने हेतु हमें जान लेना हैं कि मसीही व्यक्ति का भविष्य इस पृथ्वी पर नहीं है, परन्तु स्वर्ग में है। यह इस दृष्टान्त का महत्वपूर्ण आशय है। अविश्वासी व्यक्ति के लिए उसके भविष्य का अर्थ वर्तमान और मृत्यु इसके बीच का समय। मसीही व्यक्ति के लिए उसके भविष्य का अभिप्राय है ख्रीष्ट के साथ अनंतकाल की सहभागिता।

दृष्टान्त यह शिक्षा देता है कि मसीही लोग अपने स्वर्गीय भविष्य के लिए जो परिश्रम करते हैं उससे अधिक बुद्धिमानी और व्यग्रता के साथ नया जन्म न पाए हुए लोग इस पृथ्वी पर अपने भविष्य के प्रबन्ध के लिए प्रयासरत रहते हैं।

इसी के साथ–साथ प्रभु यीशु इस पाठ के माध्यम से व्यावहारिक शिक्षा प्रस्तुत करते हैं :

> और मैं तुम से कहता हूँ, कि अधर्म के धन से अपने लिए मित्र बना लो; ताकि जब वह जाता रहे, तो वे तुम्हें अनंत निवासों में ले लें।

अधर्म का धन पैसा और अन्य भौतिक धनसंपदा है। इन वस्तुओं के विनियोग से हम प्रभु के लिए आत्माओं को जीत सकते हैं। धन के प्रामाणिक उपयोग के द्वारा जिन लोगों को हम प्रभु के लिए जीत लेते हैं उन्हें यहाँ "मित्र" कहा गया हैं। एक दिन हम सभी असफल रह जायेंगे (या तो हम मर जायेंगे या प्रभु यीशु के साथ स्वर्ग पर उठा लिये जायेंगे)। भौतिक धनसंपदा के माध्यम से, अर्थात् उसका बुद्धिमानी के साथ उपयोग करने के द्वारा जिन मित्रों को हमनें परमेश्वर के लिए जीत लिया हैं वे उस अनंत काल के निवास में हमारा स्वागत करेंगे।

बुद्धिमान भण्डारी अपने भविष्य के लिए प्रबंध करता है–इस संसार में सुरक्षा पाने हेतु अपने जीवन के अल्प समय को व्यर्थ खोज में नहीं लगाता; परन्तु वह उस कठोर प्रयास में लगा रहता है कि जिन मित्रों को उसने अपने पैसों के द्वारा खीष्ट के लिए जीत लिया है वे स्वर्ग में उसके चारों ओर रहेंगे। वह धन जो बाइबल, नया नियम, वचन–पुस्तिकायें, ट्रैक्ट और अन्य मसीही साहित्य के प्रकाशन में लगाया गया। वह पैसा जिसके द्वारा मिशनरियों और अन्य मसीही सेवकों की आर्थिक सहायता की गई। वह पैसा जिसका विनियोग मसीही रेडियो कार्यक्रम के प्रसारण हेतु तथा अन्य मसीही कार्यकलापों के आयोजन में व्यय किया गया। संक्षेप में, वह धन जो किसी भी और हर किसी माध्यम से सुसमाचार के प्रचार में लगाया गया। "स्वर्ग में अपनी संपत्ति के संचय करने का एक ही मार्ग यह है कि हम उसे ऐसे मार्ग में लगायें जो स्वर्ग की ओर जाता है।"

जब मसीही व्यक्ति जान लेता है कि उसकी भौतिक धन सम्पत्ति मूल्यवान आत्माओं के उद्धार हेतु उपयोग की जा रही है, तब उन "वस्तुओं" के लिए उसके मन में कोई मोह बाकी नहीं रह जाता। ऐशोआराम, धन और भौतिक चकाचौंध के प्रति उसके मन में उदासीनता निर्माण होती है। वह चाहता है कि अधर्म के धन के उपासक ईश्वरीय रसायन–विद्या के प्रयोग से सदाकाल के लिए उस अद्‌भुत मेमने के उपासक बन जायें। मनुष्य के जीवन में होने वाले अनोखे कामों की संभावना से उसका हृदय संमोहित हो जाता है। ऐसे कार्य जिनके माध्यम से परमेश्वर को सदाकाल के लिए महिमा प्राप्त होगी और उसके लोगों को अनंतकाल की आशिष प्राप्त होगी। रुदरफोर्ड के समान वह भी उस प्यास को अनुभव करता है :

काश कि ॲन्‌वर्थ की एक आत्मा
मुझे परमेश्वर के दाहिने हाथ पर मिलें,
मेरा स्वर्ग, दो स्वर्ग होंगे मेरे
इम्मानुएल के देश में।

ॲनी आर. कज़न

उसके लिए हीरा, मोती और माणिक्य, सारे बँक की जमा पूँजी, सारी बीमा योजनायें, सारी आलिशान हवेलियाँ, हमारे मनोरंजनकारी नौकायान और सुन्दर कारें, सब कुछ उसके लिए अधर्म का धन है। यदि उसका उपयोग स्वार्थ के लिए किया जाए तो वह उपयोग करते करते खत्म हो जाता है, परन्तु उसका व्यय यदि प्रभु यीशु के लिए किया जाए तो हम अनंतकाल के लिए लाभांश के हकदार बन जाते है।

हम अपने सांसारिक वस्तुओं को किस तरह प्रयोग में लाते हैं, किस हद तक उन्हें पकड़े रहते हैं वही हमारे चरित्र की परीक्षा है। वचन 10 में प्रभु यीशु ने इसी बात पर बल दिया है :

जिस व्यक्ति पर हम थोडी सी बात में निर्भर रह सकते हैं उसी व्यक्ति पर हम बड़े व्यवहार के लिए निर्भर रह सकते हैं, जो व्यक्ति छोटी सी बात में अप्रामाणिक सिद्ध होता है वह बड़ी बातों में अप्रामाणिक माना जायेगा (विल्यम का अनुवाद)।

यहाँ छोटी सी बात से तात्पर्य है भौतिक वस्तुओं का भंडारीपन। जो लोग इन वस्तुओं का उपयोग परमेश्वर की महिमा के लिए और अपने सहयोगी मित्रों की आशिष के लिए करते हैं वे ही लोग निर्भर रहने योग्य है। जो लोग अपनी संपत्ति का उपयोग आरामदेह जिन्दगी के लिए और स्वार्थपर मनोरंजन के लिए करते हैं वे अप्रामाणिक हैं। जो व्यक्ति छोटी बातों के लिए (भौतिक धन के लिए) विश्वासयोग्य नहीं माना जा सकता उस पर बड़े कारोभार के लिए कैसे विश्वास किया जाए (आत्मिक बातों के भंडारीपन के लिए)। कैसे अपेक्षा की जा सकती है कि वह प्रभु यीशु का विश्वासयोग्य सेवक और परमेश्वर के भेदों का भंडारी (1 कुरिन्थियों 4:1) सिद्ध होगा।

हमारा उद्धारकर्ता अपने विवाद को और आगे प्रस्तुत करता है:

> इसलिए जब तुम अधर्म के धन में सच्चे न ठहरे, तो सच्चा तुम्हें कौन सौंपेगा (वचन 11)।

सांसारिक धन वास्तविक धन नहीं है, उसका मूल्य सांसारिक है और सीमित है। आत्मिक संपत्ति वास्तविक संपत्ति है; उसका मूल्य नहीं गिना जा सकता और उसका अन्त नहीं है। यदि कोई मनुष्य भौतिक धन के व्यवहार में निर्भर रहने योग्य न हो तो वह परमेश्वर से यह अपेक्षा नहीं रख सकता कि परमेश्वर उसे इस संसार में आत्मिक सम्पन्नता और स्वर्ग में धन प्रदान करें।

वह अपने तर्क को और आगे बढ़ाता है :

> और यदि तुम पराये धन में सच्चे न ठहरे, तो जो तुम्हारा है, उसे तुम्हें कौन देगा (वचन 12)?

भौतिक वस्तुएँ हमारी नहीं हैं; उन पर परमेश्वर का अधिकार है। जो कुछ आज हमारे पास है वह हमने परमेश्वर की ओर से पवित्र भंडारी के रुप में पाया हैं। जिसे हम अपना कह सकते हैं वह है इस संसार में हमारे परिश्रमी एवम् तत्पर अभ्यास और सेवा का फल तथा स्वर्ग में हमारे प्रामाणिक भंडारीपन का प्रतिफल। यदि हम परमेश्वर के धन के व्यवहार में निर्भर रहने योग्य सिद्ध न हुए तो इस जीवन में उसके वचन के गहन सत्य को हासिल करने की और स्वर्गीय जीवन में ईनाम पाने की आशा नहीं रख सकतें।

आगे वह सम्पूर्ण दृष्टान्त की शिक्षा का सारांश प्रस्तुत करता है:

> कोई दास दो स्वामियों की सेवा नहीं कर सकता; क्योंकि वह तो एक से बैर और दूसरे से प्रेम रखेगा; या एक से मिला रहेगा और दूसरे को तुच्छ जानेगा; तुम परमेश्वर और धन दोनों की सेवा नहीं कर सकते (वचन 13)।

हम दोनों के प्रति समान निष्ठा नहीं रख सकते। शिष्य दो संसारों के लिए नहीं जी सकता। भंडारी या तो परमेश्वर से प्रेम करेगा या तो धन से। यदि वह धन से प्रेम रखता है तो, वह परमेश्वर से तिरस्कार करेगा।

और ध्यान रहे, यह शिष्यों को लिखा गया था, न ही अविश्वासियों को।

जोश

यदि शिष्य के पास बौद्धिक क्षमता का अभाव हो तो उसे क्षमा कर दी जाएगी। यदि वह अनोखे शारीरिक साहस का प्रदर्शन नहीं कर सकता तो भी वह क्षमा का पात्र है। परन्तु यदि उसमें जोश नहीं पाया गया, तो उसे माफ नहीं किया जाएगा। यदि उसका हृदय अपने उद्धारकर्ता के लिए तपती हुई उत्कंठा से प्रज्वलित नहीं है तो वह दोषी माना जाएगा।

मसीही जन उसके शिष्य है जिसने कहा, "तेरे घर की धुन मुझे खा जाएगी" (यूहन्ना 2:17)। उनके उद्धारक के मन में परमेश्वर के लिए और उसके कामों के लिए तीव्र उत्कंठा थी। उसकी झुण्ड़ में निरूत्साही शिष्यों के लिए कोई स्थान नहीं है।

प्रभु यीशु ने आत्मिक तनाव में जीवन व्यतीत किया। यह उसके शब्दों द्वारा प्रदर्शित होता है, "मुझे तो एक बप्तिस्मा लेना है, और जब तक न हो ले मैं कैसी सकेती में रहूँगा" (लूका 12:50)। और अपने संस्मरणीय वक्तव्य में वह फिर कहता है, "जिसने मुझे भेजा है हमें उसके काम दिन ही दिन में करना अवश्य है : वह रात आनेवाली है जिसमें कोई काम नहीं कर सकता "(यूहन्ना 9:4)।

प्रभु यीशु ने यूहन्ना बप्तिस्मा करनेवाले के शब्दों का यथाविहित समर्थन किया है, "वह तो जलता और चमकता हुआ दीपक था" (यूहन्ना 5:35)।

प्रेरित पौलुस भी अपने लक्ष्य के प्रति अति आवेशी था। किसी विद्वान ने निम्नलिखित शब्दों में उसके जीवन के आवेश को अंकित करने का प्रयास किया है :

> वह ऐसा व्यक्ति है जिसे मित्र बनाने की कोई परवाह नहीं है, उसे भौतिक वस्तुओं के प्रति न तो कोई लालसा है, न ही उस संबंध में कोई आशा। उसे सांसारिक लाभ हानि का भय नहीं है, उसे जीवन से कोई आस्था नहीं है और न ही मृत्यु का भय। वह किसी भी वंश, देश अथवा स्थिति से परे है। एकही विचार उसके मनःमस्तिष्क में छाया हुआ है–प्रभु यीशु का सुसमाचार। एक ही उद्देश्य उसके सन्मुख है--परमेश्वर की महिमा। वह मूर्ख माना गया और प्रभु यीशु के लिए मूर्ख माने जाने में ही उसे संतोष है। चाहे दुनिया उसे अति उत्साही, धर्मोन्मत, बकवादी मनुष्य या अन्य कोई खिताब दें, उसे परवाह नहीं है, वह ऐसा ही सही,। यदि लोग उसे व्यवसायी, गृहस्थ, नागरिक, धनी व्यक्ति, सांसारिक पुरुष, विद्वान, अकलवान कहने लगे, तो मान लीजिए उसका मसीही चरित्र भ्रष्ट हो गया है। यदि वह बोलेगा नहीं तो मर जाएगा, और भले ही उसे मौत क्यों न आए वह बोलता रहेगा। उसे विश्राम नहीं है, वह भूमि, सागर, चट्टानों और मार्गरहित रेगिस्तानों में भागता फिरता है। वह जोर से पुकारता है और रुकता नहीं, कोई भी रुकावट उसे रोक नहीं सकती। कैदखाने में उसने अपनी आवाज उठायी,, समुद्री तुफानों में वह खामोश न रहा। उन्नत सभा–मण्ड़लियों के बीच, सिंहासन पर विराजमान राजाओं के बीच उसने सत्य की गवाही दी। मृत्यु के अलावा अन्य कोई ताकत उसकी आवाज को बुझा नहीं सकती, और मृत्यु के घेरों में भी, जब तक कोई तलवार उसका सिर उसके सीने से अलग नहीं कर देती तब तक वह बोलता रहेगा, गवाही देता रहेगा, प्रार्थना करता रहेगा, अंगीकार करता रहेगा, अनुनय करता रहेगा, लड़ता रहेगा, और अन्त में वह दुष्टों को आशिष ही देगा।

प्रभु के अन्य सेवकों ने भी, इसी ज्वलंत इच्छा का प्रदर्शन किया। सी. टी. स्टड ने लिखा है :

कुछ तो ऐसे होते है
जो चर्च की घण्टियों की आवाज
के कक्ष में रहना चाहते हैं।
परन्तु मैं तो नरक की
एक यार्ड सीमा के बीच
बचाव की एक दुकान खोलना
चाहता हूँ।

और सहसा, किसी नास्तिक ने लिखा लेख पढ़कर महाशय स्टड को खीष्ट के लिए सम्पूर्ण समर्पण करने हेतु प्रेरणा प्राप्त हुई। यह लेख इस प्रकार है :

> लाखो लोगों के समान यदि मैं दृढ विश्वास करता कि वर्तमान जीवन के ज्ञान और धर्माचरण का प्रभाव आने वाले जीवन पर पड़ता है, तो धर्म को मैं अपना सर्वस्व मानता। संसार के सारे मनोरंजन मेरे लिए कूडे के समान होते, सांसारिक चिंतायें मेरे लिए मूर्खता होती और सांसारिक विचारों और भावनाओं को मैं व्यर्थ जानता। मेरे विचारों का विषय मात्र धर्म होता, और इसके पहले की नींद मुझे अपनी आगोश में छिपा लेती धर्म की प्रतिमा मेरे आंखों के सामने तैरती रहती। मेरा सारा परिश्रम धर्म के लिए होता। अनंतकाल की भोर के लिए ही मैं चिंता करता। स्वर्ग के लिए एक आत्मा को जीतना इतना महत्वपूर्ण होता कि उसके लिए मैं यातनाभरा जीवन भी आनंद से व्यतीत करता। सांसारिक प्रभाव मेरे हाथ को नहीं रोक पाते और न ही वे मेरे होठों को बंद करते। यह पृथ्वी, उसके आनंद और उसके दुःख मेरे विचारों में एक क्षण भी न होते। मैं मात्र अनंतकाल का अवलोकन करने हेतु और मेरे चारों ओर अमर आत्माओं को देखने हेतु निरन्तर प्रयासरत रहता। मैं समय असमय संसार के पास जाकर सुसमाचार सुनाता, और मेरे प्रचार का विषय होता—**यदि मनुष्य समस्त संसार को पा ले और अपनी आत्मा को खो दें तो उसके लिए क्या लाभ?**

जॉन वेस्ली जोशिला व्यक्ति था। उसने कहा, "मुझे ऐसे पुरुष दे दो जो अपने परमेश्वर से अपने सम्पूर्ण हृदय से प्रेम करते हैं और पाप के अलावा और किसी बात का भय नहीं रखते, और मैं समस्त संसार को हिलाकर रख दूँगा।"

इक्वाडोर का शहीद, जिम इलियट प्रभु यीशु के लिए आग की जलती मशाल था। जब वह, "अपने दूतों को पवन और अपने सेवकों को धधकती आग बनाता है" (इब्रानियों 1:7), इन वचनों पर मनन कर रहा था, तब उसने अपनी डायरी में इस प्रकार लिखा।

> क्या मैं ज्वलनशील हूँ? परमेश्वर मुझे "अन्य वस्तुओं" की न जलने वाली धातु बनने से रोकें। मुझे आत्मा के तेल से सरोबार कर ताकि मैं ज्वाला बन जाऊँ। परंतु ज्वाला अस्थायी और क्षणिक होती है। क्या तू मेरे इस अल्प जीवन को, मेरी आत्मा को सह सकता है? मुझ में उस महान "अल्पजीवी" का आत्मा वास करता है, जिसे परमेश्वर की धुन ने खा लिया था। "हे परमेश्वर की ज्वाला, मुझे तेरा ईंधन बना।"

अंतिम वाक्य ऍमी कारमाइकल की आवेशी कविता से उद्धृत किया गया है। जिम इलियट ने इन पंक्तियों से प्रेरणा प्राप्त की इसमें कोई आश्चर्य नहीं :

उस प्रार्थना से जो मांगती है कि मैं
उन आंधियों से बची रहूँ
जो तुझसे टकराई थी,
भय से जब मैं चाहती हूँ,
लड़खड़ाने से जब मैं ऊंचा चढ़ती हूँ
उस रेशम से प्रतीत होते 'मैं' से
हे सेनाधिराज, मुझे, तेरे सिपाही को
आज़ाद कर, जो तेरे पीछे हो लेगा।
उन कोमल लुभावनी वस्तुओं के प्रेम से,
आसान चुनाव से, दुर्बलताओं से;
हमारी आत्माएं सुरक्षित नहीं रह पाती,

इस मार्ग से हमारा प्रभु
जो क्रूस पर चढ़ाया गया था,
नहीं चला,
उन सब बातों से जिनसे मुझे कलवरी
घुँधली दिखाई देती है
हे परमेश्वर के मेमने, मुझे बचा।
मुझे वह प्रेम दे जो मार्ग में ले चले,
वह विश्वास जिसे कोई भयभीत नहीं कर सकता,
वह आशा जिसे निराशाएँ थका नहीं सकती,
वह आवेश जो आग के समान जलता है,
मुझे मिट्टी का ढेला बनकर गिरने न दें;
हे परमेश्वर की ज्वाला,
मुझे अपना ईंधन बना।

इस बीसवीं सदी की कलीसिया के लिये यह शर्मनाक बात है कि कम्युनिस्ट मतानुयायियों में और धर्म सम्प्रदायों का अवलम्बन करने वालों में मसीही लोगों से अधिक जोश और उत्साह है।

सन् 1903 में, एक व्यक्ति ने अपने सत्रह अनुयायियों के साथ दुनिया पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। उसका नाम था लेनिन। 1918 में उनकी संख्या बढ़कर चालीस हजार हो गयी, और उन चालीस हजार चेलों की बदौलत एक करोड़ साठ लाख जनसंख्या वाले रशिया पर कब्जा कर लिया। यह आन्दोलन चलता रहा और आज एक तृतीयांश संसार पर इस विचारधारा का नियंत्रण है। हम भले ही उसके सिध्दांतों के विरोधी हो, परंतु हमें उनके उत्साह एवम् उमंग की दाद देनी चाहिये।

जब बिली ग्राहम ने प्रथम बार निम्नलिखित पत्र पढ़कर सुनाया, तब कई मसीही लोगों का माथा चकारा गया। यह पत्र एक अमेरिकन कॉलेज के छात्र ने लिखा था जो कि मेक्सिको शहर में कम्युनिस्ट विचारधारा का अनुयायी बन गया था । इस पत्र के द्वारा उसने अपने मंगेतर के साथ सगाई तोंड़ देने की वजह का स्पष्टीकरण किया है :

हम कम्युनिस्ट लोग बड़े पैमाने पर दुर्घटनाग्रस्त हो जाते हैं। हम गोली से उड़ा दिये जाते हैं और फाँसी पर चढ़ा दिये जाते हैं और बिना पूछताछ के हमें मृत्युदण्ड दिया जाता हैं और हमारे मुँह पर कालिख पोत दी जाती हैं और हमें कैदखाने में डाला जाता हैं और हमारा मजाक उड़ाया जाता हैं और हमें कलंकित किया जाता हैं और हमें नौकरी से निकाल दिया जाता हैं, और हमें हर तरह से यथासंभव परेशान किया जाता हैं। कुछ तो प्रतिशत मार डाले जाते हैं या कैद कर दिये जाते हैं। हम प्रत्यक्ष कंगाली में जीवन व्यतीत करते हैं। हमें जीवन जीने के लिये नितांत आवश्यक धन को छोड़ हर पाई हम अपने पक्ष को लौटा देते हैं। हम कम्युनिस्ट मतावलंबियों के पास सिनेमा, संगीत जलसा और टी–बोनस्टीक, या आलिशान हवेलियाँ और नई कारें आदि बातों के लिये समय और धन नहीं है। हमें हठधर्मी का खिताब दिया गया है। हम हठधर्मी हैं। हमारे जीवन पर एक ही बात की प्रभुता है,–**विश्व साम्यवाद के लिये संघर्ष !**

हम कम्युनिस्ट लोगों के पास जीवन का ऐसा दर्शनशास्त्र है जिसे पैसों से खरीदा नहीं जा सकता। हमारे पास लड़ने के लिये निमित्त है, जीवन के लिये निश्चित उद्देश्य हैं। हम एक बड़े विशाल मानव आंदोलन के लिये अपनी क्षुद्र, स्वार्थ पर, लालसाओं पर नियंत्रण रखते हैं, और यदि हमें अपना जीवन दुःसह जान पड़े, और यदि पक्ष की अधिनता से हमारे अहम् को चोट पहुंचती है, तो हम यह सोचकर संतोष मान लेते हैं कि हममें से प्रत्येक अपने अपने तरीकों से मानव जाति के लिये कुछ नया और सच्चा और बेहतर योगदान कर रहे हैं। मैं एक ही बात के लिये गंभीर हूँ और वह है साम्यवाद। यही मेरा जीवन है, मेरा उद्योग, मेरा धर्म, मेरा प्रिय विषय है, यही मेरी प्रेमिका, मेरी पत्नी और प्रियतमा, यही मेरा भोजन है। मैं दिन में उसके लिये परिश्रम करता हूँ और रात में उसका ख्वाब देखता हूँ। उसका नियंत्रण मुझ पर और अधिक मजबूत होता जा रहा

> है। इस कारण मैं मित्रता नहीं कर सकता, प्रेम संबंध नहीं रख सकता, न ही मैं अपने पक्ष को बताये बिना किसी से वार्तालाप कर सकता हूँ क्योंकि वही मेरे जीवन का संचालन एवम् मार्गदर्शन करता है। मैं लोगों, पुस्तकों, विचारों और कार्यों का मूल्यांकन इस दृष्टिकोण से करता हूँ कि उन बातों का कम्युनिस्ट कार्यकलापों पर क्या प्रभाव पड़ता हैं और उस विचारधारा की ओर रुख क्या है। मेरे विचारों के लिये मैं कैद कर लिया गया हूँ और शायद मुझे बंदूकधारियों का सामना करना पड़ेगा।

यदि एक साम्यवादी व्यक्ति अपने विचारों के प्रति इस तरह समर्पित रह सकता है तो मसीही जन को कितना अधिक अपने अद्‌भुत प्रभु के लिये प्रेममय और सहर्ष भक्तिभाव का प्रतिदान करना चाहिए। अवश्य ही, प्रभु यीशु सारी बातों के लिये योग्य है। "यदि मसीही जीवन विश्वास करने योग्य है तो हमें उस पर बड़ी वीरता के साथ विश्वास करने की आवश्यकता है"—फिन्डले।

> यदि परमेश्वर ने प्रभु यीशु के लिये वास्तव में कुछ किया है जिस पर संसार का उद्धार निर्भर है, और यदि इस सत्य की उसने घोषणा की है, तो यह हमारा मसीही कर्तव्य है कि हम ऐसी सारी बातों के विरोध में दृढ़ खड़े हो जायें जो इस पवित्र उद्देश्य की उपेक्षा करती है, उसका इन्कार करती है। —जेम्स डिनी

परमेश्वर को ऐसे लोगों की आवश्यकता है जो पूर्णतया पवित्र आत्मा के नियंत्रणाधीन हो जाना चाहते हैं। उन्हें देखकर शायद लोग मान लें कि वे शराब से मतवाले हो गये हैं, परंतु जो उनसे परिचित हैं वे जान लेंगें कि "वे परमेश्वर के प्रति एक गंभीर, विशाल अपरितृप्त और अपरितुष्ट प्यास रखते हैं।"

प्रत्येक होने वाले शिष्य को इस बात का गंभीरतापूर्वक ग्रहण करना है कि उसके जीवन में जोश या आवेश की नितांत आवश्यकता है। बिशप रायल द्वारा दिए गये वर्णन को पूरा करने की वह लालसा रखें :

> धर्माचरण में आवेशी व्यक्ति प्रधान रुप से *एक ही बात* का

लक्ष्य रखता है। वह उद्योगी हो, अनमनीय और दृढ़ हो, आंतरिक और पक्का हो, आत्मा में आवेशी हो इतना ही पर्याप्त नहीं। वह केवल एक ही बात की ओर दृष्टि करता है, एक ही बात की परवाह करता है, एक ही बात के लिए जीता है, एक ही बात में लिप्त रहता है: और वह बात है परमेश्वर को प्रसन्न करना। वह जीये, या वह मरे,– उसके पास स्वास्थ्य हो, या वह रोगी हो,– वह धनी हो, या वह निर्धन हो,– वह मनुष्य को प्रसन्न करें, या वह किसी का दिल दुखायें,– उसे बुध्दिमान् माना जायें, या उसे मूर्ख जाना जायें,– उस पर दोष लगाया जायें, या उसकी प्रशंसा की जायें,– उसे आदर मिले, या उसे लज्जित होना पड़े–इन सब के बावजूद, आवेशी व्यक्ति किसी बात की परवाह नहीं करता। एक ही बात की लगन उसे होती है; और वह है परमेश्वर को प्रसन्न करना और परमेश्वर की महिमा को आगे बढ़ाना। यदि यह आग उसे भस्म भी कर दें तो उसे परवाह नहीं,–वह संतुष्ट है। वह सोचता है कि वह दीपक के समान बनाया गया है; और वह जलते जलते भस्म भी हो गया तो उसने अपना कार्य पूरा कर दिया है जिसके लिये परमेश्वर ने उसे नियुक्त किया है। ऐसे व्यक्ति को हमेशा ही अपने उत्साह के लिये पर्याप्त क्षेत्र मिल जाता है। यदि वह प्रचार नहीं कर सकता, यदि वह काम नहीं कर सकता और यदि वह धन नहीं दे सकता, तो वह रोएगा, आहें भरेगा और प्रार्थना करेगा। जी हाँ: यदि वह निष्कांचन कंगाल है, बीमारी के बिछौने पर है, तो वह अपनी अनवरत मध्यस्थि के द्वारा पाप के चक्र की गती को धीमा कर देता है। यदि वह तराई में यहोशू के साथ युद्ध नहीं कर सकता, तो वह पहाड़ पर मूसा, हारुन और हूर के साथ होगा (निर्गमन17:9–13)। यदि वह स्वयंम् काम न कर सका, तो वह अन्य किसी स्थान से सहायता प्राप्त करने तक, और उस कार्य को पूरा करने तक परमेश्वर को चैन नहीं लेने देगा। यही मेरे कथन का आशय है।

विश्वास

जीवित परमेश्वर में निःसंदेह तथा गहन प्यार के बिना हम मसीह के सच्चे शिष्य नहीं बन सकते। जो उसके लिए बड़े बड़े काम करना चाहता है उसे प्रथम अपने विश्वास में दृढ़बध्द होने की आवश्यकता है। "परमेश्वर के सभी महान सेवक दुर्बल व्यक्ति थे जिन्होंने उसके लिये बडे साहसिक कार्य किए क्योंकि वे परमेश्वर की संगति के लिए उस पर निर्भर थे"–हडसन टेलर।

सच्चा विश्वास सदा परमेश्वर के किसी वचन पर, उसके वचन के किसी अंश पर आधारित होता है। यह अति महत्वपूर्ण है। विश्वासी व्यक्ति प्रथम परमेश्वर के किसी वायदे को पढ़ता या सुनता है। पवित्र आत्मा उस वचन को लेकर उसके हृदय से और व्यक्तिगत रुप से उसके विवेक से बातचीत करता है। मसीही व्यक्ति यह बात जान लेता है कि परमेश्वर ने प्रत्यक्ष रुप से उससे बातचीत की है। जिसने वायदा किया है उसकी विश्वासयोग्यता पर पूर्ण भरोसा रखकर वह पूरी दृढ़ता के साथ यह मान लेता है कि वह वचन पूरा हो चुका है, जबकि मानवीय दृष्टिकोण से यह असंभव है।

शायद वह वायदा न होकर एक आज्ञा है। परंतु विश्वास के लिये उसमें कोई भेद नहीं है। यदि परमेश्वर आदेश देता है, तो वह

सामर्थ भी देता है। यदि वह पतरस को पानी पर चलने की आज्ञा देता है, तो पतरस को इस बात के लिये निश्चय होना चाहिये कि उसे आवश्यक सामर्थ दी जायेगी (मत्ती 14:28)। यदि वह हमें सारी मानव जाति को सुसमाचार सुनाने का आदेश देता है, तो हमें विश्वास करना हैं कि हमें जरुरी अनुग्रह प्रदान किया जायेगा (मरकूस 16:15)।

विश्वास संभव के क्षेत्र में कार्य नहीं करता। जो बातें मानवीय दृष्टिकोण से संभव हैं उसमें परमेश्वर की महिमा को कोई स्थान नहीं। जहाँ मनुष्य की सामर्थ खत्म होती है वहाँ विश्वास का प्रारंभ होता है। "जहाँ सम्भावनायें खत्म हो जाती है, जहाँ दृष्टि और बुध्दी काम नहीं आती वहाँ विश्वास का कार्य आरम्भ हो जाता है"– जॉर्ज म्युलर।

विश्वास कहता है, "यदि 'असम्भव ही' मात्र विरोध का कारण है तो वह किया जायेगा।"

"विश्वास परमेश्वर को सामने लाता है और इस कारण उसके लिए कोई कठिनाईयाँ नहीं होती–वह असम्भव बातों का मजाक उड़ाता है। विश्वास के अनुसार प्रत्येक प्रश्न का प्रधान उत्तर और हरेक उलझन की प्रधान सुलह परमेश्वर है। सभी बातें उसकी ओर निर्देश करती हैं और विश्वास के लिए यह बात मायने नहीं रखती कि वह छः लाख डॉलर्स है या छः सौ करोड़। वह जानता है कि परमेश्वर सब कुछ पूरा करने वाला परमेश्वर है। वह अपना सर्वस्व उसी में पाता है। अविश्वास कहता है, 'यह बातें ऐसे कैसे हो सकती हैं?' उसमें अनेकों 'कैसे' होते हैं, परन्तु विश्वास के पास इस तरह के दस हजार प्रश्नों के लिए एक ही उत्तर है, और वह उत्तर है : परमेश्वर –सी. एच. मॅकिनटॉश।

मानवीय दृष्टिकोण से इब्राहीम और सारा के लिए पुत्र को जन्म देना असम्भव था। परन्तु परमेश्वर ने वायदा किया था और इब्राहीम के सामने एक ही असम्भव बात थी कि परमेश्वर झूठ नहीं बोल सकता।

> उसने निराशा में भी आशा रखकर विश्वास किया, इसलिए कि उस वचन के अनुसार कि तेरा वंश ऐसा होगा, वह बहुत

सी जातियों का पिता हो। और वह जो एक सौ वर्ष का था, अपने मरे हुए से शरीर और सारा के गर्भ की मरी हुई की सी दशा जानकर भी विश्वास में निर्बल न हुआ। और न अविश्वासी होकर परमेश्वर की प्रतिज्ञा पर संदेह किया, पर विश्वास में दृढ़ होकर परमेश्वर की महिमा की। और निश्चय जाना, कि जिस बात की उस ने प्रतिज्ञा की है, वह उसे पूरी करने को भी सामर्थी है (रोमियों 4:18:21)।

वचन देखता है विश्वास, महान विश्वास.
और देखता है केवल परमेश्वर की ओर;
वह असम्भव को हँसता है
और पुकार कर कहता, "वह पूरा होगा।"

हमारा परमेश्वर सारी असम्भव बातों के विषय में विशेषज्ञ है (लूका 1:37)। उसके लिए कोई काम कठिन नहीं (उत्पत्ती 18:14)। "जो मनुष्य से नहीं हो सकता, वह परमेश्वर से हो सकता है" (लूका 18:27)।

विश्वास वायदा की गयी वस्तु दावे के साथ माँगता है, "विश्वास करनेवाले के लिए सब कुछ हो सकता है" (मरकूस 9:23), वह पौलुस के साथ आनंद मनाता है, "जो मुझे सामर्थ देता है उस में मैं सब कुछ कर सकता हूँ" (फिलिप्पियों 4:13)।

सन्देह रुकावटों को देखता है–
विश्वास देखता है मार्ग!
सन्देह देखता है रात अन्धेरी–
विश्वास दिन का उजियाला देखता!
सन्देह कदम बढ़ाने से भयभीत–
विश्वास की ऊँची उड़ान,
सन्देह कहता, "कौन विश्वास करें?"
विश्वास कहता, "मैं!"

विश्वास अद्‌भुत और ईश्वरीय बातों के साथ वास्ता रखता है,

विश्वास की बातें कई बार 'न्यायसंगत' प्रतीत नहीं होती। व्यावहारिक दृष्टि से, इब्राहीम का परमेश्वर की आज्ञा मान कर, कहाँ जाना है यह न जानकर भी निकल पडना, 'बुद्धिमानी' का कार्य नहीं जान पड़ता (इब्रानियों 11:8)। मृत्यु के हथियारों के बगैर यरीहो शहर पर आक्रमण करना यहोशू के लिए कोई अकलमंदी का कार्य नहीं था (यहोशू 6:1–20)। संसार के लोगों ने इस तरह के कामों को "पागलपन" जाना होगा। परन्तु उसके द्वारा सफलता मिली!

वास्तव में, विश्वास ही की बातें सर्वाधिक न्यायसंगत होती है। रचना अपने रचनाकार पर विश्वास करें इस से अधिक न्यायसंगत बात और क्या हो सकती है? जो कभी झूठ नहीं बोलता, जो कभी धोखा नहीं देता, जो कभी गलती नहीं करता ऐसे परमेश्वर में विश्वास करना क्या मूर्खता है? मनुष्य के लिए परमेश्वर पर भरोसा रखना सर्वाधिक विचारयुक्त, युक्तियुक्त और बुद्धिमानी की बात है। हम अन्धियारे में छलाँग नहीं लगा रहे। विश्वास निश्चित प्रमाण माँगता है और यह प्रमाण वह परमेश्वर के दृढ़ वचन में पाता है। किसी ने उस पर व्यर्थ विश्वास नहीं किया और न कोई करेगा। परमेश्वर में विश्वास करने में कोई खतरा नहीं है।

विश्वास सचमुच परमेश्वर की महिमा करता है, जो पूर्णतया विश्वासयोग्य है उसे उसका उचित स्थान विश्वास प्रदान करता है। दूसरी ओर अविश्वास परमेश्वर का अनादर करता है; वह उस पर झूठेपन का आरोप लगाता है (1 यूहन्ना 5:10)। वह इस्राएल के पवित्र परमेश्वर को सीमित करता है (भजन 78:41)।

विश्वास मनुष्य को उसके सही स्थान पर लाता है, परमप्रधान प्रभुताधारी परमेश्वर के सामने विनत नम्र याचक के रुप में।

विश्वास दृश्य बातों का विरोधी है। पौलुस हमें स्मरण दिलाता है कि "हम रुप को देख कर नहीं, परन्तु विश्वास से चलते हैं" (2 रा कुरिन्थियों 5:7)। देखकर चलने का अर्थ है दिखाई देने वाली

बातों के आधार पर चलना, भविष्य का पर्याप्त प्रबन्ध कर लेना, अनदेखे खतरों के विरोध में मानवीय चतुराई का उपयोग करना। विश्वास की चाल पूर्णतया विपरीत है; विश्वास का अर्थ है क्षण–प्रतिक्षण केवल परमेश्वर पर निर्भर रहना। यह निरंतर परमेश्वर पर निर्भर रहने का प्रश्न है। हमारी देह अनदेखे परमेश्वर पर पूर्ण रुप से अवलंबित रहने से हिचकिचाती है। वह संभाव्य हानियों के लिए सुरक्षा का प्रबन्ध चाहती है। यदि हम यह नहीं देख पाये कि हमें कहाँ जाना हैं, तो हमारी चेतना लुप्त हो जाती है। परन्तु परमेश्वर के वचन को मानने हेतु विश्वास आगे कदम बढाता है और परिस्थिति के ऊपर उठता चला जाता है तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परमेश्वर पर भरोसा करता है।

हरेक शिष्य जो विश्वास से चलने की प्रतिज्ञा करता है वह निश्चित रुप से जान ले कि उसका विश्वास परखा जाएगा। जल्द ही उसकी भौतिक संपत्ति खत्म हो जाएगी। उसे अपने साथियों की मदत लेने का मोह होगा। यदि वह वास्तव में परमेश्वर पर भरोसा करता है तो वह परमेश्वर की ओर देखेगा।

"प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से, मनुष्य के समक्ष अपनी आवश्यकताओं को प्रगट करने का अर्थ है विश्वास के जीवन से दूर हो जाना, यह प्रगट रुप से परमेश्वर का अनादर है। यह उसे धोखा देना है। यह 'परमेश्वर मेरी सहायता करने में असमर्थ रहा है, और अब मुझे अपने मित्रों की सहायता लेनी चाहिए", यह कहने के समान है। यह जीवन जल के झरने को त्याग कर टूटे हुए हौदों को खोजने के समान है। मेरे और परमेश्वर के बीच में किसी रचना वस्तु को रखना है, इसके द्वारा मैं अपने प्राण को आशिष पाने से और परमेश्वर को योग्य महिमा पाने वंचित करता हूँ"–सी. एच. मॅकिन्टॉश।

अपने विश्वास में बढने की चाह रखना शिष्य की सामान्य प्रवृत्ति है (लूका 17:5)। उसने ही उद्धार के लिए पहले प्रभु यीशु पर

भरोसा किया है। जीवन के जिस क्षेत्र को उसने परमेश्वर के नियंत्रण में दे दिया है उन बातों का अब वह विस्तार चाहता है। जब वह बीमारी, परीक्षाएँ, दुर्घटनाएँ, प्रियजनों से वियोग आदि बातों का अनुभव पाता है, तब वह परमेश्वर को नये रुप से और निकटता से जानने लगता है और उसका विश्वास दृढ़ हो जाता है। और परमेश्वर का वचन उसके जीवन में सत्य सिद्ध होता है, "आओ, हम ज्ञान ढूँढे, वरन् यहोवा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए यत्न भी करें" (होशे 6:3)। जितना अधिक वह परमेश्वर को विश्वासयोग्य पाएगा, उतना अधिक वह बड़ी बातों के लिए उस पर विश्वास करने हेतु उत्कंठित रहेगा।

विश्वास सुनने से और सुनना परमेश्वर के वचन से होता है, इसलिए शिष्य परमेश्वर के वचन को पूर्ण रुप से ग्रहण करने की चाह रखें–उसे पढ़े, उसका अध्ययन करें, उस पर रात दिन मनन करें। यही उसका नक्शा है, उसका मानचित्र है, यही उसका मार्गदर्शन और उसका समाधान है, उसका दीपक और उसका उजियाला है।

विश्वास के जीवन में हमेशा उन्नति के लिए स्थान है। जब हम पढ़ते है कि विश्वास के द्वारा क्या हासिल किया गया है, तब हम जान लेते हैं कि हम एक विशाल महासागर के छोर पर खेल रहे छोटे बालकों के समान है। इब्रानियों की पत्री के 11 वे अध्याय में विश्वास के साहसिक कृत्यों की सूची दी गयी है। 32 से 40 वे वचनों में इस विश्वास की पराकाष्ठा का बडे सुंदर ढंग से वर्णन किया गया है:

> अब और क्या कहूँ? क्योंकि समय नहीं रहा, कि गिदोन का, और बाराक और समसून का,और यिफतह का, और दाऊद और शमुएल का, और भविष्यद्वक्ताओं का वर्णन करुँ। इन्होंने विश्वास ही के द्वारा राज्य जीते; धर्म के काम किए, प्रतिज्ञा की हुई वस्तुएँ प्राप्त की, सिंहो के मुँह बंद किए। आग की ज्वाला को ठंड़ा किया, तलवार की धार से बच निकले, निर्बलता में बलवन्त हुए; लड़ाई में वीर निकले, विदेशियों की फौजों को मार भगाया। स्त्रियों ने अपने मरे

हुओं को फिर जीवता पाया। कितने तो मार खाते खाते मर गए; और छुटकारा न चाहा; इसलिए कि उत्तम पुनरुत्थान के भागी हो। कई एक ठट्ठों में उड़ाए जाने, और कोड़े खाने, बरन बान्धे जाने, और कैद में पड़ने के द्वारा परखे गए। पत्थरवाह किए गए, आरे से चीरे गए, उन की परीक्षा की गई, तलवार से मारे गए, वे कंगाली में और क्लेश में और दुख भोगते हुए भेंड़ों और बकरियों की खालें ओढ़े हुए, इधर उधर मारे मारे फिरे। और जंगलों, और पहाड़ों, और गुफाओं में, और पृथ्वी की दरारों में भटकते फिरें। संसार उनके योग्य न था: और विश्वास ही के द्वारा इन सब के विषय में अच्छी गवाही दी गई, तौभी उन्हें प्रतिज्ञा की हुई वस्तु न मिली। क्योंकि परमेश्वर ने हमारे लिए पहिले से एक उत्तम बात ठहराई कि वे हमारे बिना सिद्धता को न पहुँचे।

अंतिम विचार! हम ने पहले ही कहा हैं कि जो शिष्य विश्वास के द्वारा चलना चाहता है उसे इस संसार के जन स्वप्नदर्शी या हठधर्मी यह संज्ञा देंगे, इसमें कोई संदेह नहीं। परन्तु यह संस्मरणीय है कि "जो विश्वास उसे 'परमेश्वर के साथ' चलने हेतु सबल बनाता है वही विश्वास उसे मनुष्य के विचारों को उचित मूल्य प्रदान करने मे समर्थ बनाता है"—सी. एच. मॅकिन्टॉश।

प्रार्थना

प्रार्थना के विषय पर यदि कोई यथोचित पुस्तक लिखी गयी है तो वह है–बाइबल। जब हम इस विषय से सम्बद्ध अन्य साहित्य का अध्ययन करते हैं तब हम अनुभव करते हैं कि हम अब तक उस गहराई तक नहीं पहुँचे हैं, हमने अब तक वह ऊँचाईयाँ नहीं नापी हैं। इस पुस्तक में हम अन्य लोगों के प्रयासों का सुधार करने का प्रयत्न नहीं कर सकते। हम यहाँ प्रार्थना के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का सारांश देखने का प्रयास करेंगे, खासकर मसीही शिष्यता से सम्बद्ध सिद्धान्तों का।

(1) सब से उत्तम प्रार्थना तीव्र आंतरिक आवश्यकता से उत्पन्न होती है। हम सभों के जीवन में यह बात सत्य साबित हुई है। जब हमारे जीवन में शान्ति और गम्भीरता होती है, तब हमारी प्रार्थनाएँ मन्द, सुस्त और उदासीन होती हैं। जब हम किसी संकट में पड़ जाते हैं, खतरा हमारे सिर पर मँडराता है, गम्भीर रोग अथवा भारी वियोग हमारे जीवन में आ पडता है, तब हमारी प्रार्थनाएँ आवेशी और अत्यावश्यक बन जाती हैं। किसी ने कहा है, "जो तीर हम स्वर्ग में पहुँचाना चाहते हैं, वह ऐसी कमान से निकला हो जो पूरी तरह से झुकी है।" सर्वोत्तम प्रार्थना का जन्म अत्यावश्यकता और लाचारी के बोध से होता है। दुर्भाग्यवश, हम इन आवश्यकताओं से खुद को बचाने के प्रयास में

अपना जीवन व्यतीत कर देते हैं। हमारी चतुर व्यापार व्यवस्था के द्वारा हम प्रत्येक संभाव्य दुर्घटना के लिए पर्याप्त धनसंचय करते हैं। मात्र हमारी मानवीय चतुराई के द्वारा हम उस स्थान पर पहुँचते हैं जहाँ हमें सम्पन्न कहा जा सकता हैं, हम सुखसुविधाओं से समृद्ध हो जाते हैं और हमें किसी बात की आवश्यकता नहीं होती। और फिर हम इस बात से अचंभित रह जाते हैं कि हमारा प्रार्थना जीवन क्यों छिछला और निर्जीव है, हमारी प्रार्थना में स्वर्गीय आग क्यों उण्ड़ेली नहीं जा रही। यदि हम देख कर चलने के बजाय वास्तव में विश्वास के द्वारा चलते, तो हमारे प्रार्थना जीवन में आमूल परिवर्तन आ जाता।

(2) सफलतापूर्वक प्रार्थना की एक शर्त यह है कि हम "सच्चे मन से परमेश्वर के समीप जाएँ" (इब्रानियों 10:12)। इसका अर्थ यह है कि हम परमेश्वर के निकट पूर्ण प्रामाणिकता एवम् सच्चाई के साथ जाएँ। हमारे चालचलन में कपट न हो। यदि हम इस शर्त को पूरा करते हैं तो हम परमेश्वर से ऐसी कोई बात नहीं माँगेंगे जिसे हम स्वयम् ही पूरा कर सकते हैं। मिसाल के तौर पर, यदि हमारे पास आवश्यकता से अधिक धन है जिसका उपयोग हम परमेश्वर के कार्य के लिए कर सकते हैं तो परमेश्वर से हम यह प्रार्थना नहीं करेंगे कि वह किसी मसीही योजना के लिए अन्य स्थान से पर्याप्त धन भेजें। परमेश्वर ठट्ठो में नहीं उड़ाया जाता। यदि उसने पहले ही उत्तर दे दिया है और हम उसका उपयोग करना नहीं चाहते, तो वह हमें फिर उत्तर नहीं देगा।

यदि हम स्वयम् उसके कार्य के लिए जाने हेतु तैयार नहीं हैं, तो हम यह प्रार्थना न करें कि वह अन्य लोगों को उस सेवाकार्य के लिए भेजें। हिन्दू, मुसलमान और बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए हजारों प्रार्थनाएँ आज तक की गयी हैं। परन्तु वे जिन्होंने इस तरह की प्रार्थना की, यदि उन लोगों तक सुसमाचार पहुँचाने हेतु तैयार होते तो आज मसीही संस्था का इतिहास अधिक प्रेरणादायी होता।

(3) प्रार्थना में सादगी होनी चाहिए। वह विश्वासपूर्ण एवम् सन्देह से परे हो। प्रार्थना से सम्बन्धित ईश्वरविज्ञान विषयक समस्याओं में उलझना ठीक नहीं है। उससे हमारी आत्मिक चेतनाएँ मन्द हो जाती हैं। प्रार्थना से सम्बद्ध समस्याओं को सुलझाने के बजाय प्रार्थना करना बेहतर है। ईश्वरविज्ञान के विद्वानों को प्रार्थनाविषयक सिद्धान्तों को गढ़ने दीजिए। लेकिन एक सामान्य विश्वासी को चाहिए कि वह अपने बालकसदृश्य विश्वास के द्वारा स्वर्ग के फाटकों को हिलाकर रख दें। ऑगस्टीन ने कहा है, "अनपढ़ जन अपने बल से स्वर्ग को खींच लेते हैं, और हम अपने सारे ज्ञान के साथ इस लोहू और माँस की संरचना से आगे बढ़ ही नहीं पाते।"

मैं नहीं जानती किस तरह,
मैं इतना जानती हूँ–परमेश्वर प्रार्थना सुनता है।
मैं नहीं जानती वह वचन कब भेजता,
कि उसने मेरी सुन ली है।
सुनेगा वह, है निश्चय
प्रार्थना करते रुकना है।
मैं नहीं जानती आशिष वह
जिस रुप सोची आवेगी।
उस पर मैं सब कुछ छोड़ूँ,
मुझ से अधिक वह बुद्धिमान।

–लोला सी. हेन्सन

(4) यदि हम प्रार्थना में सामर्थ पाना चाहते हैं तो हमें कुछ भी रोक नहीं रखना चाहिए। ख्रीष्ट के अधीन हो जाएँ। उसके प्रति पूर्ण रुप से समर्पित हो जाएँ, उद्धारकर्ता के पीछे चलने हेतु सर्वस्व त्याग दें। जो भक्ति प्रभु यीशु को गौरवान्वित करती है, उसी भक्ति को सम्मानित करना वह पसन्द करता है।

(5) जिस प्रार्थना के लिए हमें किमत चुकाना पडती हैं वही

प्रार्थना परमेश्वर की दृष्टि में मौल्यवान सिद्ध होती है। जो लोग सुबह जल्द उठते हैं, वे ही उस प्रभु की उपस्थिति का आनंद अनुभव कर सकते हैं जो स्वयम् भोर को जाग कर अपने पिता से दिन भर के लिए मार्गदर्शन पाता था। उसी तरह जो प्रिय जन रात की खामोशी में अपनी आँखों की नींद झटक कर प्रार्थना में समय व्यतीत करते हैं, वे उस परमेश्वर की सामर्थ क़ा अनुभव करते हैं जिसे इन्कार नहीं किया जा सकता। जिस प्रार्थना के लिए कुछ भी कीमत अदा नहीं की गयी है उस प्रार्थना का कोई मूल्य नहीं, वह सस्ते मसीहियत की उपज है।

नए नियम में प्रार्थना का संबंध उपवास के साथ जोड़ा गया है। भोजन से संयम रखना आत्मिक अभ्यास में सहाय्यभूत सिद्ध होता है। मानवीय दृष्टिकोण से, उपवास स्पष्टता, एकाग्रता एवम् व्यग्रता को बढ़ावा देता है। ईश्वरीय दृष्टि से ऐसा प्रतीत होता है कि जब हम भोजन से अधिक महत्व प्रार्थना को देते हैं तब वह विशेष रुप से हमारी प्रार्थना का उत्तर देना पसंद करता है।

(6) स्वार्थपूर्ण प्रार्थना से दूर रहिए। "तुम माँगते हो और पाते नहीं, इसलिए कि बुरी इच्छा से माँगते हो, ताकि अपने भोग–विलास में उड़ा दो "(याकूब 4:3)। हमारी प्रार्थना का प्रधान बोझ प्रभु के हित में हो। पहले हम प्रार्थना करें, "तेरा राज्य आए, तेरी इच्छा जैसी स्वर्ग में पूरी होती है, वैसे पृथ्वी पर भी हो।" फिर हम कहे, "हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।"

(7) हम बड़ी बड़ी माँगो के द्वारा परमेश्वर को आदर दें क्योंकि वह महान परमेश्वर है। "परमेश्वर से बड़ी बड़ी बातों को पाने हेतु हम विश्वास करें।

राजा के पास तू आकर अब
बड़ी बातों को माँग;
उसका प्रेम और सामर्थ है
तेरी माँगो से विशाल!

–जॉन न्यूटन

"कितनी बार हमने छोटी–सी बातों की अपेक्षा कर प्रभु के दिल को दुखाया हैं। हम छोटी–सी विजय से, थोड़े से लाभ से सन्तुष्ट है, ऊँची बातों के लिए हमारी आशाएँ इतनी दुर्बल है कि हमारा परमेश्वर महान परमेश्वर है इस विचार से हम अपने निकटवर्तियों को प्रभावित नहीं कर सकते। जैसा प्रेरित पौलुस के विषय कहा गया कि उन्होंने मुझ में परमेश्वर की महिमा की, ऐसा हमारे विषय में नहीं कहा जा सकता"–इ. डब्लू. मूर।

(8) प्रार्थना करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना आवश्यक हैं कि हम परमेश्वर की इच्छा के अंतर्गत हैं। और तब हम प्रार्थना करें, यह विश्वास करते हुए कि परमेश्वर हमारी सुनकर हमें उत्तर देगा। "और हमें उसके सामने जो हियाव होता हैं, वह यह है, कि यदि हम उसकी इच्छा के अनुसार कुछ माँगते हैं, तो वह हमारी सुनता है। और जब हम जानते हैं, कि जो कुछ हम माँगते हैं वह हमारी सुनता है, तो यह भी जानते हैं, कि जो कुछ हम ने उस से माँगा, वह पाया है" (1 यहून्ना 5:14,15)।

प्रभु यीशु के नाम में प्रार्थना करने का अर्थ है उसकी इच्छा के अन्तर्गत प्रार्थना करना। जब हम उसके नाम से प्रार्थना करते हैं तब मानों वह स्वयम् उस बिनती को अपने शब्दों में परमेश्वर के सन्मुख प्रस्तुत कर रहा है। "और जो कुछ तुम मेरे नाम से माँगोगे, वही मैं करुँगा कि पुत्र के द्वारा पिता की महिमा हो। यदि तुम मुझ से मेरे नाम से कुछ मांगोगे, तो मैं उसे करुँगा" (यूहन्ना 14:13,14)। "उस दिन तुम मुझ से कुछ न पूछोगे: मैं तुम से सच सच कहता हूँ, यदि पिता से कुछ मांगोगे, तो वह मेरे नाम से तुम्हे देगा" (यूहन्ना 16:23)। "फिर मैं तुम से कहता हूँ, यदि तुम में से दो जन पृथ्वी पर किसी बात के लिए जिसे वे माँगे, एक मन के हो, तो वह मेरे पिता की ओर से जो स्वर्ग में है उनके लिए हो जाएगी। क्योंकि जहाँ दो या तीन मेरे नाम पर इकट्ठे होते हैं, वहाँ मैं उनके बीच में होता हूँ" (मत्ती 18:19,20)।

"उसके नाम से माँगने का अर्थ है वह हमारा हाथ थामकर प्रार्थना में हमारी अगुवाई करता है। इसका अर्थ यह है कि वह हमारे पास घुटनों पर बैठकर अपनी इच्छाओं को हमारे हृदय के माध्यम से उण्ड़ेलता है। 'उसके नाम से' इस शब्द–प्रयोग का यही अर्थ है। उसका नाम है वह जो कुछ है, उसका स्वभाव और इसीलिए खीष्ट के नाम में प्रार्थना करने का अर्थ है धन्य इच्छा के अनुसार प्रार्थना करना। क्या मैं परमेश्वर के पुत्र के नाम में बुराई के लिए प्रार्थना कर सकता हूँ? जो कुछ मैं प्रार्थना करता हूँ वह वास्तव में उसके स्वभाव की अभिव्यक्ति हो। क्या मैं यह प्रार्थना कर सकता हूँ? प्रार्थना द्वारा पवित्र परमेश्वर की सामर्थ, खीष्ट का मन, उसकी हममें और हमारे लिये इच्छा प्रकट हो। प्रभु हमें उसके नाम में प्रार्थना करने के विषय में और अधिक सिखाता रहे। 'हमारे प्रभु यीशु के धन्य नाम में' इन शब्दों के बिना हम अपनी प्रार्थना बन्द करने का विचार न करें परन्तु सभी निवेदन प्रभु यीशु के अद्भूत नाम के द्वारा, उस नाम के अनुसार परमेश्वर तक पहुँचाया जाए" –सॅम्युएल राइडआऊट।

(9) यदि हम चाहते हैं कि हमारा प्रार्थना जीवन वास्तव में प्रभावी हो तो हमें परमेश्वर के साथ अपना हिसाब किताब साफ रखना होगा। इसका अर्थ यह है कि जैसे ही हम जान लेते हैं कि पाप ने हमारे जीवन में प्रवेश किया है वैसे ही हमें उसे कबूल करना हैं और उसे त्याग देना हैं। "यदि मैं मन में अनर्थ बात सोचता, तो प्रभु मेरी न सुनता" (भजन संहिता 66:18)। हमें मसीह में बने रहने की आवश्यकता है। "यदि तुम मुझ में बने रहो, और मेरी बातें तुम में बनी रहे तो जो चाहो माँगो और वह तुम्हारे लिए हो जाएगा" (यूहन्ना 15:7)। जो व्यक्ति मसीह में बना रहता है वह उसके इतने निकट रहता है कि वह प्रभु की इच्छा के ज्ञान से परिपूर्ण हो जाता है। वह बुद्धिमानी के साथ प्रार्थना कर सकता है और उसे उत्तर की खात्री होती है। यह प्रभु में बने रहनेवाला जीवन यह चाहता है कि हम उसकी आज्ञाओं को मानें। "और जो कुछ हम माँगते हैं, वह हमें उस से मिलता है; क्योंकि हम

उसकी आज्ञाओं को मानते हैं और जो उसे भाता है वही करते हैं (1 यूहन्ना 3:22)। यदि हम चाहते हैं कि हमारी प्रार्थनाएँ सुनी जाएँ और उनका उत्तर हमें मिले तो उसके लिए सही हृदय की आवश्यकता है।

(10) हम दिन में एक निश्चित समय में ही प्रार्थना न करें, परन्तु प्रार्थना का भाव अपना लें ताकि राह चलते हुए, कार चलाते हुए या ऑफिस में काम करते हुए या घर में व्यस्त रहते समय प्रभु की ओर देखते रहें। नहेम्याह इस तरह की स्वयंस्फूर्त प्रार्थना का उत्तम उदाहरण है (नेहेम्याह 2:4)। कभी कभार उस स्थान को भेंट देने के बजाय, निरंतर 'परमप्रधान के छाये हुए स्थान में वास करना' क्या ही भला है।

(11) अंतिम बात, हमारी प्रार्थनाओं का विषय निश्चित हो। जब हम निश्चित बातों के लिए प्रार्थना करते हैं, तब हम उसके लिए निश्चित उत्तर पाते हैं।

प्रार्थना एक अनोखा अधिकार है। जैसा हड़सन टेलर ने कहा है, इस माध्यम से हम परमेश्वर के द्वारा मनुष्य को सक्रिय बनाते हैं। "प्रार्थना के अद्‌भुत संसार में चमत्कार करने हेतु कैसी अनोखी सेवाएँ हमारे हाथों में सौंपी गयी है। उदासीभरे सर्द स्थानों में हम सूर्य की किरणें बिखेर सकते हैं। निराशा के कैदखाने में आशा का दीप जला सकते हैं। कैदी बन्धनों को छुड़ा सकते हैं। दूर के देशों में हम घर के सुखदायक विचारों की मन्दप्रभा को ले जा सकते हैं। सात समुंदर पार परिश्रम करने वाले प्रियजनों को, जो आत्मा में मूर्छित हो गए हैं, स्वर्गीय औषधि पहुँचा सकते हैं। प्रार्थना के उत्तर में आश्चर्यकर्म" —जे.एच. जोवेट।

वेनहॅम नायक लेखक इसके साथ अपनी गवाही पेश करते हैं : "उपदेश एक अनुठा वरदान है। और प्रार्थना उस से अधिक। उपदेश तलवार के समान निकट से चलाया जाने वाला हथियार है, उसके द्वारा दूर तक नहीं पहुँचा जा सकता। प्रार्थना का लक्ष्य बन्दूक के समान दूर तक होता है। और कुछ परिस्थिति में उससे अधिक

प्रभावकारी सिद्ध होता है।

प्रभु, क्या ही बदलाव मुझ में इन चन्द लम्हों में
जो प्रार्थना के वे अद्‌भुत क्षण लाते हैं,
वो भारी बोझ उठा ले जाते
सूखी भूमि में ताजगी लाते, जल से सींचते हैं।
जब हम घुटने टेंकते हैं,
सब कुछ चारो ओर झुक जाता;
जब हम उठते, दूर और पास में
सब कुछ साफ दिखायी देता,
घुटने टेकते जब कमजोर हम,
उठते फिर सामर्थ के साथ!
फिर हम क्यों गलती करते हैं,
और न होते हैं बलवान
चिन्ताओं का बोझ हो भारी–
और दुर्बल और लाचार भी,
व्याकुल क्यों, जब प्रार्थना साथ हो
और आनंद और बल और साहस?

–ट्रेन्च

युद्धनीति

नया नियम पढ़ने वाला हरेक व्यक्ति यह समझे बिना नहीं रह सकता कि पृथ्वी पर प्रभु यीशु की योजना को स्पष्ट करने हेतु युद्धनीति का चित्र बारबार प्रयुक्त किया गया है। सच्ची मसीहियत आधुनिक मसीहियत के भद्दे मनोरंजन से कोसो दूर है। वर्तमान समय में प्रचलित ऐशोआराम और सुखविलास की कल्पनाओं में हमें मसीहियत को लेकर नहीं उलझना चाहिए। इसके विपरीत, मृत्युसमय तक वह एक संघर्ष है, नरक की सेना के विरोध में वह एक अनवरत लड़ाई है। जो सिपाही यह समझता नहीं कि युद्ध अब छिड़ चुका है और वह वापस नहीं लौट सकता, वह नमक हराम है।

युद्ध में एकता की आवश्यकता है। यहाँ आपसी द्वेषभाव के लिए, पक्षभेद और कलह के लिए समय नहीं है।

इसलिए यह अवश्य है कि मसीह के सिपाही एकता में बद्ध हो। एकता नम्रता के माध्यम से आती है। फिलिप्पियों की पत्री के 2 रे अध्याय में इस विषय पर स्पष्ट शिक्षा दी गयी है। जो व्यक्ति वास्तव में नम्र है उसके साथ संघर्ष करना असंभव है। लड़ने के लिए दो व्यक्तियों की आवश्यकता है। जहाँ घमण्ड नहीं, वहाँ विवाद नहीं।

युध्द के लिए कट्टरता और बलिदान का जीवन आवश्यक है।

युद्धकाल में सभी वस्तुएँ राशन के माध्यम से मिलती है। अब हम इस बात को समझ ले कि हम युद्ध में हैं और हमें अपने व्यय में कटौति करना हैं ताकि हम यथासंभव धन इस युद्ध में जुटा सकें।

आर. एम. नामक एक युवा शिष्य ने इस बात को भली भाँति समझ लिया। सन 1960 में वह एक मसीही पाठशाला के नवीं कक्षा का अध्यक्ष था। उसके कार्यकाल के दौरान यह प्रस्ताव रखा गया कि कक्षा की पार्टियों और भेटों के लिए खर्च किया जाए। चुँकि, इस व्यय के द्वारा सुसमाचार को बढ़ावा नहीं मिल रहा था, इस कारण इस सुझाव में सहयोग देने के बजाय आर. एम. ने अपने पद से इस्तिफा दे दिया। जिस दिन उसके इस्तिफे के विषय में सूचित किया गया उस दिन निम्नलिखित पत्र उसकी कक्षा के छात्रों को वितरीत किया गया :

प्रिय कक्षा मित्र,

जिस समय से पार्टियाँ और भेंट आदि बातों के लिए व्यय करने का प्रस्ताव कॅबिनेट के सामने रखा गया, उस समय से इस अध्ययन कक्षा का अध्यक्ष होने के नातें इस मामलें में मसीही विचारधारा क्या हो इस के विषय में सोच रहा हूँ।

मैं सोचता हूँ, यदि हम अपना धन और अपना समय और स्वयम् अपने आपको मसीह के लिए और अन्य लोगों के लिए दे देते हैं तो हम ने जीवन का सब से बड़ा आनंद पा लिया है। हम ने अपने जीवन में उसके वचन की सच्चाई पूरी कर ली है।

यह कैसी विडंबना है कि मसीही लोग अपना समय और अपना धन ऐसे बातों पर खर्च करें जिसका उपयोग अविश्वासियों को सुसमाचार सुनाने में नहीं किया जा रहा है, न ही प्रभु के लोगों की आत्मिक उन्नति के लिए किया जा रहा है, जबकि संसार में प्रति दिन 7000 लोग भूखमरी से मरते है और 50 प्रतिशत से अधिक लोगों ने मनुष्य की उस एकमात्र आशा के विषय में कभी सुना ही नहीं।

यदि हम अपने धन और समय का व्यय अपने स्वार्थ एवम् मनोरंजन पर करने के बजाय, हमारे विचारों की समानता रखने वाले लोगों तक हमारी सामाजिक रुचि को सीमित करने के बजाय जिन्होंने प्रभु यीशु के विषय में आज तक नहीं सुना हैं, ऐसे संसार के अन्य 50 प्रतिशत लोगों तक या हमारे पड़ोस के कई घरों में सुसमाचार पहुँचाने में सहायता करेंगे तो हम वास्तव में उसे बड़ी ही महिमा प्रदान कर पायेंगे।

प्रभु यीशु की महिमा के लिए, उसी तरह स्वदेश में और विदेश में भी अपने मित्रों की सहायता के लिए धन किस प्रकार उपयोग किया जा संकता है, उसकी निश्चित आवश्यकताएँ और अवसर आदि बातों की मैं पूर्ण जानकारी रखता हूँ। इस कारण मैं कक्षा के पैसों से अपने आप पर अनावश्यक रुप से खर्च करने के विरोध में हूँ, उसके लिए अनुमति देना मेरे लिए असंभव है। यदि मैं उन जरुरतमंद लोगों में से होता, जैसे आज कई है, तो मैं उन लोगों से आशा रखता, जिन में देने की सामर्थ है, कि वे मुझे सुसमाचार दें और मेरी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करें।

"इस कारण जो कुछ तुम चाहते हो कि मनुष्य तुम्हारे साथ करें, तुम भी उनके साथ वैसा ही करो।"

"पर जिस किसी के पास संसार की संपत्ति हो और वह अपने भाई को देख कर तरस खाना न चाहे, तो उस में परमेश्वर का प्रेम क्योंकर बना रह सकता है?"

इस कारण प्रेम और प्रार्थना के साथ मैं 63 की कक्षा के अध्यक्ष पद से इस्तिफा देता हूँ, ताकि तुम "उस प्रभु को देख सको जिसने अपना सर्वस्व दे दिया" (2 कुरिन्थियों 8:9)।

उसमें आपके साथ,

आर. एम.

युद्ध में दुःख उठाने का भाव निहित है। यदि आज युवा पुरुष अपने देश के लिए अपने प्राण देने हेतु तैयार होते हैं, तो क्योंकर

मसीही लोग मसीह के लिए और उसके सुसमाचार के लिए अपना जीवन देने हेतु तत्पर न हो? यदि हमने अपने जीवन में प्रभु यीशु को स्थान दिया है तो वह हमारे लिए सर्वस्व हो। हमारी व्यक्तिगत सुरक्षा का प्रश्न और कष्टों से बचने की मनसा हमें उसकी सेवा से वंचित न करने पाएँ।

संकुचित विचारधारा के आलोचकों के हमलों से अपनी प्रेरिताई का बचाव करते हुए पौलुस ने अपने पारिवारिक पृष्ठभूमि का, अपनी शिक्षा का या अपनी सांसारिक सफलताओं का सहारा नहीं लिया। जो दुःख उसने मसीह के लिए उठाया था उस ओर वह संकेत करता है, "क्या वे ही मसीह के सेवक हैं? (मैं पागल की नाई कहता हूँ) मैं उनसे बढ़कर हूँ। अधिक परिश्रम करने में, बार बार कैद होने में, कोड़े खाने में, बार बार मृत्यु के जोखिमों में। पाँच बार यहूदियों के हाथ से उन्तालीस उन्तालीस कोड़े खाए। तीन बार मैंने बेतें खाई; एक बार पत्थरवाह किया गया; तीन बार जहाज जिन पर मैं चढ़ा था, टूट गए; एक रात दिन मैंने समुद्र में काटा। मैं बार बार यात्राओं में; नदियो के जोखिमो में, ड़ाकूओ के जोखिमों में, अपने जातिवालों से जोखिमों में; अन्यजातियों से जोखिमो में, नगरो में के जोखिमों में, जंगल के जोखिमों में, झूठे भाईयों के बीच जोखिमों में, परिश्रम और कष्ट में, बार बार जागते रहने में, भूख–पियास में, बार बार उपवास करने मे, जाड़े में, उघाड़े रहने में, और और बातों को छोड़कर जिन का वर्णन मैं नहीं करता सब कलीसियाओं की चिन्ता प्रतिदिन मुझे दबाती है" (2 कुरिन्थियो 11:23–28)।

पुत्र तीमुथियुस को चुनौति देते हुए वह आग्रह करता है, "मसीह यीशु के अच्छे योद्धा की नाई मेरे साथ दुःख उठा" (2 तीमुथियुस 2:3)।

युद्ध में सन्देहरहित आज्ञापालन का भाव निहित है। सच्चा सिपाही अपने अफसरों के आदेशों का बिना प्रश्न पूछे और अविलंब

पालन करता है। क्या प्रभु यीशु भी यह नहीं चाहता? हमारा उद्धारक, हमारा रचियता होने के नाते उसे पूरा अधिकार है कि जो लोग युद्ध में उसके पीछे चलते हैं उनसे वह अपेक्षा रखें कि वे उसके आदेशों का पूर्ण रुप से एवम् तुरन्त पालन करें।

युद्ध में हथियारों का कुशलतापूर्वक उपयोग किया जाना चाहिये। मसीही व्यक्ति के हथियार है प्रार्थना और परमेश्वर का वचन। हमें व्यग्रता, विश्वास और यत्नशीलता के साथ प्रार्थना में लगे रहना हैं। तभी हम शैतान के गढ़ो को ढा सकेंगे। उसे आत्मा की तलवार के प्रयोग में प्रवीण होना चाहिए। यह है परमेश्वर का वचन। शैतान अपनी पूरी सामर्थ के साथ इस तलवार को गिराने की कोशिश करेगा। वह हमारे मन में परमेश्वर के वचन के प्रति सन्देह डालने का प्रयास करेगा। वह पवित्र शास्त्र में से परस्पर विरोधी बातों को प्रस्तुत करेगा। वह विज्ञान से, तत्वज्ञान से तथा मानवी परम्पराओं का आधार लेकर विवाद उत्पन्न करेगा। परन्तु मसीह के सिपाही को अपने स्थान पर दृढ़ खड़े रहना है और समय–असमय अपने हथियारों को प्रयोग में लाना है।

मसीही युद्ध के हथियार संसार के समक्ष मूर्खतापूर्ण जान पडते हैं। इस युग के सेना–प्रमुख यरीहो की युद्धनीति का मजाक उडाएँगे। गिदोन की सामान्य फौज उपहास की पात्र सिद्ध होगी। और दाऊद की गोफन का पत्थर, शमगार का अंकुश और सदियों से लड़ती आ रही परमेश्वर की तुच्छ सेना के विषय में क्या कहा जाएँ? हमारी आत्मिक बुद्धी से हम यह जानते हैं कि परमेश्वर संसार के बड़े पलटन की ओर से नहीं लड़ता, परन्तु वह दुर्बल, कमजोर और संसार के तुच्छ लोगों को चुनकर उनके द्वारा अपनी महिमा करा लेता है।

युद्ध में शत्रु का तथा उसकी युद्धनीति का ज्ञान रखना आवश्यक है। मसीही युद्धनीति में भी यही नियम लागू है। "क्योंकि हमारा यह मल्लयुद्ध लोहू और मांस से नहीं, परन्तु प्रधानों से और अधिकारियों से और इस संसार के अन्धकार के हाकिमों से, और उस दुष्टता की

आत्मिक सेनाओं से है जो आकाश में है" (इफिसियों 6:12)। हम जानते हैं कि शैतान आप भी ज्योतिर्मय स्वर्गदूत का रुप धारण करता है। सो यदि उसके सेवक भी धर्म के सेवकों का सा रुप धरें, तो कोई बड़ी बात नहीं, परन्तु उन का अन्त उन के कामों के अनुसार होगा (2 कुरिन्थियों 11:13,14)। प्रशिक्षा–प्राप्त मसीही सिपाही जानता है कि उसे शराब, वेश्या और चोर, बदमाशों द्वारा विरोध का सामना नहीं करना पड़ेगा, उसके प्रधान शत्रु हैं धर्म के अगुवे। धर्म के अगुवों ने ही परमेश्वर के प्रभु यीशु ख्रीष्ट को सूलि पर चढ़ाया था। धर्म के अगुवों ने ही प्रारंभिक कलीसिया का सताया था। जो खुद को परमेश्वर के सेवक मानते थे उन्हीं लोगों ने पौलुस पर जानलेवा हमले किये। सदियों से ऐसा ही होता आ रहा है। शैतान के शागिर्दों ने धर्मविदों का रुप धारण कर लिया हैं। उनके होठों पर धर्मशास्त्र हैं, वे धार्मिक वस्त्र पहनते हैं, वे धर्म का स्वांग रचते है, परन्तु उनके हृदय धर्म के प्रति और सुसमाचार के प्रति द्वेष से भरे हैं।

युद्ध में चित्र की एकाग्रता का भाव निहित है। "जब कोई योध्दा लड़ाई पर जाता है, तो इसलिए कि अपने भरती करनेवाले को प्रसन्न करें, अपने आप को संसार के कामों में नहीं फँसाता" (2 तीमुथियुस 2:4)। सच्चा शिष्य प्रभु यीशु के प्रति पूर्ण रुप से समर्पित होता है। इस समर्पण और उसकी आत्मा के बीच कोई प्रतिबंध न आने पाए इसलिए वह चौकस रहता है। आक्रमक न होते हुए भी वह अपने ध्येय के प्रति निर्मम भाव से समर्पित है, वह असभ्य नहीं है, परन्तु दृढ़ है। उसे एक ही बात की लगन है। अन्य बातें उसके नियंत्रणाधीन है।

युद्ध में खतरों की बीच साहस को होना नितान्त आवश्यक है। "इसलिए परमेश्वर के सारे हथियार बाँध लो, कि तुम बुरे दिन में सामना कर सको, और सब कुछ पूरा करके स्थिर रह सको। सो सत्य से..." (इफिसियों 6:13,14)। ऐसा प्रायः कहा जाता है कि इफिसियों 3:18 में वर्णित हथियार पीठ की सुरक्षा के लिए कोई प्रबन्ध नहीं करता

और पीछे हटने के लिए कोई जगह नहीं है। पीछे क्यों हटें? "जिसने हम से प्रेम किया उस के द्वारा हम जयवन्त से भी बढ़कर है।" हमारे विरोध में कोई विजयी नहीं हो सकता क्योंकि परमेश्वर हमारी ओर से है, यदि युद्ध छिड़ने से पहले ही हमारी विजय निश्चित है तो हम कैसे पीछे मुड़ने का विचार करें?

क्या मैं जीतनेवालों के साथ रहूँ खडा,
या हारने वालों के साथ नाश हो जाऊँ?
जो डरते हैं वे पापी हैं,
लड़ते ही रहना है सदा।
ताकतवर है शत्रु जो आगे बढ़ता है,
मेरी तलवार कुछ टूटती है, प्रभु;
उनके गर्वित झण्डे और बर्छियाँ चलती–
पर मेरे तलवार की ठूँठ गिरने न देना!

–ॲमि कारमायकल द्वारा उध्दृत

संसार पर प्रभुता

परमेश्वर ने हमें संसार पर प्रभुता करने हेतु बुलाया है। उसने कभी यह नहीं चाहा कि हम संसार में मनुष्य के रुप में जन्म लें और मर जाएँ। उसका यह उद्देश नहीं था कि हम संसार के अस्थायी उद्यमों में अपना वक्त गँवाए।

जब उसने मनुष्य की उत्पत्ति की तब उसने उसे सारी पृथ्वी पर अधिकार दिया। उसने उसे महिमा और आदर से मुकुटित किया, सारी बातों को उसके अधीन कर दिया। प्रभुत्व और प्रतिष्ठा से उसे गौरवित किया–स्वर्गदूतों से उसे थोड़ा ही कम बनाया।

अपने पाप के द्वारा आदम कई अधिकारों से वंचित हो गया जो ईश्वरीय व्यवस्था के द्वारा उसे प्राप्त हुए थे। अपनी अविसंवादित प्रभुता जताने के बजाय वह अनिश्चित क्षेत्र में अस्थिर रुप से राज्य करने लगा।

सुसमाचार की पुस्तकों में एक अर्थ से यह प्रभुता हम पुनः हासिल कर सकते हैं। यह भौंकते हुए कुत्तों और विषैले साँपों पर नियंत्रण करने की बात नहीं, परन्तु हम अन्य जाति के लोगों को विरासत में और दूर दूर के देशों को अपनी सम्पत्ति के रुप में माँग सकते हैं। "सच्चे साम्राज्यवाद का अर्थ है नैतिक एवम् आत्मिक

प्रभुता का साम्राज्य, पवित्र एवम्, शुद्ध जीवन से दमकता हुआ अधिकार" –जे. एच. जोवेट।

वास्तव में, मसीही बुलाहट के प्रतिष्ठा के विषय में आदम अज्ञान था। हम संसार के छुटकारे में परमेश्वर के साँझेदार हैं। "यह हमारा सन्देश है कि प्रभु यीशु के नाम में राजसी जीवन के लिए, 'स्व' पर प्रभुत्व करने के लिए तथा राज्य की सेवा करने हेतु लोगों का अभिषेक करें।"–(डिन्स्डेल टी. यंग)

वर्तमान जीवन की त्रासदी यह है कि हम अपनी ऊँची बुलाहट को पहचान पाने में असफल रहे हैं। छोटी छोटी बातों में ही हम सन्तुष्ट हैं, अनावश्यक बातों में अपना समय गँवा रहे हैं। ऊँची उड़ान भरने के बजाय हम रेंगने लगे हैं। राजा बनने के बजाय हम दास बने हैं। बहुत कम लोग हैं जिनके पास राष्ट्रों को माँगने का दर्शन हैं।

स्पर्जन इसके लिए अपवाद था। उसने अपने पुत्र को यह प्रभावी पंक्तियाँ लिखकर भेजी :

> यदि परमेश्वर तुझे मिशनरी बनाना चाहता है तो मैं यह नहीं चाहूँगा कि तू करोड़पति के रुप में मरे।
>
> यदि तू मिशनरी बनने के योग्य है तो मैं यह नहीं चाहूँगा कि तू राजा के साथ मूर्खतापूर्वक वार्तालाप करें।
>
> आत्माओं को परमेश्वर के लिए जीतने की प्रतिष्ठा, परमेश्वर के राज्य के लिए कुछ रचना करने का सम्मान, दूसरे मनुष्य की नींव पर नहीं, परन्तु दूर दराज़ के क्षेत्रों में मसीह का सुसमाचार फैलाने का आनन्द, इन बातों के सामने हमारे समस्त राजा, हमारे सारे सरदार, सारे मुकुट, सारा राजवैभव क्या है?

विख्यात मिशनरी राजनीतिज्ञ जॉन मॉट उन्हीं में से एक था। जब प्रेसिडेन्ट कुलिज़ ने उनसे कहा कि वे जापान के राजदूत के रुप में कार्यभार उठा लें, तब मॉट ने उत्तर दिया, "श्रीमान प्रेसिडेन्ट, परमेश्वर ने मुझे अपना राजदूत नियुक्त किया है, और दूसरी बुलाहट

को सुनने में मैं असमर्थ हूँ।"

ब्रिली ग्राहम तीसरा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं; "द स्टॅण्डर्ड ऑईल कम्पनी" दूरस्थ पूरबी देशों में अपने लिए एक व्यक्ति को प्रतिनिधी के रुप में ढूँढ़ रही थी और उन्होंने इस काम के लिए एक मिशनरी को पसन्द किया। उन्होंने उसे दस हजार देने का वायदा किया, परन्तु उसने इन्कार कर दिया। उन्होंने उक्त रकम बढ़ाकर पच्चीस हजार कर दी, लेकिन वह तैयार न हुआ। अन्त में उन्होंने पचास हजार देने का निर्णय लिया, उसने इन्कार करते हुए कहा, "आपका वेतन तो ठीक है, परन्तु आपका पद बहुत छोटा है। परमेश्वर ने मुझे मिशनरी होने के लिये बुलाया है।"

मसीही बुलाहट सबसे गरिमापूर्ण बुलाहट है, और यदि हम इस बात को समझ लेंगे तो हमारा जीवन नयी ऊँचाईयों को हासिल करता जाएगा। फिर हमें ऐसे कहने की आवश्यकता नहीं होगी कि "मैं नल सुधारने वाला हूँ" अथवा "मैं डॉक्टर हूँ" या "दाँतों का डॉक्टर हूँ।" इसके बदले में हम स्वयम् की ओर एक प्रेरित के रुप में देखेंगे– "मैं प्रेरिताई के लिए बुलाया गया हूँ" और अन्य सभी पद मेरे लिए जीविका के साधन मात्र है।

हम इस बात पर गौर करेंगे कि हम संसार की हरेक जाति को सुसमाचार सुनाने हेतु बुलाये गये हैं। सभी राष्ट्रों को चेले बनाने हेतु और संसार में प्रभु यीशु का सन्देश सुनाने हेतु बुलाये गये हैं।

शायद आप कहेंगे, यह बहुत विशाल कार्य है? जी हाँ। यह अवश्य ही एक विशाल कार्य है, परन्तु असंभव नहीं। इस कार्य की विशालता निम्नलिखित अनुच्छेद में अति सुक्ष्म रुप से सुवर्णित की गयी है :

यदि हम अपने मन में संसार की जनसंख्या का संक्षिप्त रुप सोच सकते हैं जो कि इस समय तीन–सौ अरब की है–अर्थात्, एक शहर में रहने वाले एक हजार के समूह के रुप में इस संख्या

को संकुचित किया जाए तो निम्नलिखित चित्र हम स्पष्ट रुप से देख पाएँगे।

60 व्यक्ति यू. एस. जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करेंगे और अन्य नौ सौ–चालीस लोग अन्य देशों के प्रतिनिधि ठहरें। इस पूरे शहर की कुल आय का 35 प्रतिशत हिस्सा यह 60 अमरिकी लोग पाते है तथा बचा हुआ 65 प्रतिशत अन्य 940 लोगों में वितरीत किया जाता है।

शहर के 36 अमरिकी मसीही कलीसिया के सदस्य हैं, अन्य 24 लोग नहीं। पूरे शहर में 290 लोग मसीही होंगे, अन्य 710 नहीं। सम्पूर्ण शहर से कम–से–कम 80 व्यक्ति साम्यवादी विचारधारा का पालन करते हैं, 370 लोग साम्यवादी प्रशासन के अधीन रहते हैं। संभवतः, पूरे शहर से 70 लोग प्रोटेस्टन्ट मसीही कहलाये जाते हैं।

पूरे शहर से 303 लोग गोरे हैं और अन्य 697 लोग अन्य वर्ण के हैं। 60 अमरिकी लोगों की औसत आयु 70 वर्ष की है और अन्य 940 लोगों की औसत आयु 40 वर्ष से कम है।

अमरिकी लोगों के पास अन्य लोगों से औसतन 15.5 गुना अधिक पाया जाता है। शहर की कुल उत्पादन के 16 उत्पादन अमरिकी व्यक्ति करता है और उस अन्य सामग्री के 1.5 प्रतिशत को छोड़ अन्य सब उपज का उपभोग अमरिकी व्यक्ति ही लेता है। उसमें से अधिकतर भाग वह भविष्य के उपयोग के लिए मँहगे सँचय साधनों में संग्रहित कर रखता है। यदि इस बात को स्मरण में रखा जाये कि शहर के 940 गैर अमरिकी लोग भूखे रहते हैं, वे नहीं जानते कि उन्हे पर्याप्त भोजन कब प्राप्त होगा तो भोजन आपूर्ति और उसका विशाल संचय इसमें वर्तमान विषमता अधिक स्पष्ट रुप से प्रगट होती है, खासकर यह देखते हुए कि अमरिकी व्यक्ति इष्टतम भोजन आवश्यकता के 72 प्रतिशत से अधिक अन्न का लाभ स्वयम् उठाता है। अतिरिक्त भोज सामग्री को देकर वे अपने धन की बचत कर सकते हैं जिसे वे इस धन का संचय करने

में लगा देते हैं। परन्तु वे सोचते हैं कि ऐसा करना हानिकारक सिद्ध होगा।

शहर की कूल आपूर्ति के 12 गुना अधिक बिजली का लाभ 60 अमरिकी व्यक्ति उठाते हैं। 22 गुना ज्यादा कोयला वह पाता है, 21 गुना अधिक पेट्रोल का लाभ उसे होता है तथा 50 गुना ज्यादा स्टील और 50 गुना ज्यादा साजसामग्री का लाभ वह पाता है।

इन 60 अमरिकी लोगों में न्यूनतम आय वाले गुट शहर के अन्य औसतन लोगों से अधिक अच्छे हालात में है। मूलतः, शहर के अधिकतर गैर–अमरिकी लोग दरिद्री, भूखे, बीमार एवम् अज्ञान है। उनमें से प्रायः 50 प्रतिशत से अधिक लोगों ने मसीह के विषय में नहीं सुना है, परन्तु जल्द ही यह 50 प्रतिशत से अधिक लोग कार्ल मार्क्स की शिक्षा के विषय में सुन पाएँगे।

–हेन्री स्मिथलीपर

सो हमारी पीढी में इस संसार के पास मसीह का सुसमाचार कैसे पहुँचाया जाएगा? यह कार्य उन स्त्री और पुरुषों के द्वारा सम्पन्न होगा जो परमेश्वर को अपने सम्पूर्ण हृदय से प्रेम करते हैं और अपने पड़ोसियों से अपने समान प्रेम रखते हैं। अखण्ड प्रेम से प्रस्फुटित समर्पण और भक्ति के द्वारा यह महान कार्य पूरा होगा।

जो लोग मसीह के प्रेम से प्रेरित होते हैं वे उसके लिए किसी भी बड़े समर्पण के लिए तत्पर रहते हैं। जो कार्य वे उसके प्रेम के खातिर करने हेतु तैयार हो जाते है वे कार्य वे सांसारिक लाभ के लिए कभी नहीं कर पाएँगे। अपने प्राणों को वे प्रिय नहीं जानते। सुसमाचार के अभाव में मनुष्य का नाश न हो इसी उद्देश्य से वे खुद को दाव पर लगा देते हैं।

हे प्रभु क्रूसित, मुझे तुझ समान हृदय दे।
मुझे मनुष्य की नाश होती आत्मा के लिए
प्रेम करना सिखा–

मेरा हृदय तुझ से लगा रहे–
मुझे प्रेम दे–कल्वरी का शुद्ध प्रेम
ताकि नाश होने वालों को
तेरे निकट लाऊँ।

–जेम्स ए. स्टेवर्ट

यदि प्रेम से प्रेरणा न हो तो कार्य करना निरर्थक है। उस से कोई लाभ नहीं। सेवकाई केवल झनझनाती हुई झाँझ और ठनठनाता हुआ पीतल बनी रहेगी। जब प्रेम का दीप मार्ग दिखाये, जब मनुष्य खीष्ट के प्रति समर्पण के भाव से प्रज्वलित हृदय लेकर आगे बढ़ते जाये तो संसार की कोई सामर्थ सुसमाचार के फैलाव को रोक नहीं सकती।

शिष्यों के झूण्ड की कल्पना कीजिए जो प्रभु यीशु के प्रति बेचा गया है, खीष्ट के प्रेम से प्रेरित होकर उस महिमामय सन्देश के अग्रगामी दूत बन कर भूमि और सागर को लांघते चले जाते हैं। वे निरंतर नये स्थानों की ओर चले जाते हैं। हरेक प्राणिमात्र में वे उस आत्मा को खोजते हैं जिसके लिए यीशु मर गया और प्रत्येक को सदा काल के लिए उद्धारकर्ता की उपासना करने वाले बनाना चाहते हैं। खीष्ट को प्रगट करने हेतु यह 'अन्य–विश्व' के लोग (स्वर्गीय लोग) कौनसा मार्ग अपनाते हैं?

नए नियम की पुस्तक में संसार में सुसमाचार फैलाने हेतु दो मार्ग प्रस्तुत किये गये है। प्रथम है सार्वत्रिक घोषणा के माध्यम से, दूसरा है निजी शिष्यता के अभ्यास के द्वारा।

सुसमाचार का पहला मार्ग प्रभु यीशु ने और उसके शिष्यों ने अपनाया था। जब लोग इकट्ठा होते थे तब उन्हें सुसमाचार का अवसर प्राप्त होता था। इस प्रकार बाजारों में, कैदखानों में, यहूदी मंदिरों में, समुद्री तट पर, नदियों के तट पर सुसमाचार सुनाया जाता था। सुसमाचार की नितान्त आवश्यकता और उसके गुणों को देखते हुए किसी नियुक्त स्थान में इन प्रचार सभाओं को सीमित करना

अयोग्य था।

मसीही विश्वास की दूसरी विधि है व्यक्ति को निजी रुप से शिक्षा देकर चेले बनाना। इस विधि के माध्यम से प्रभु यीशु ने बारह शिष्यों को प्रशिक्षित किया। उसने एक छोटे झूण्ड़ को चुन लिया कि वे उसके साथ रहे और वह उन्हें बाहर भेज सकें। वह नित्य उन्हें परमेश्वर के सत्य वचन की शिक्षा देता था। जिस कार्य के लिए उसने उन्हें चुना था, उस कार्य को उसने उनके सन्मुख प्रस्तुत किया था। आनेवाले संकटों एवं कठिनाईयों के विषय में उसने उन्हें सचेत किया था। परमेश्वर की निजी बातों को वह उन पर प्रगट करता और महिमामय परन्तु कठिन ईश्वरीय योजना में उसने उन्हें समभागी बनाया था। भेड़ियों के बीच में भेंड़ों के रुप में उसने उन्हें भेजा था। पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होकर वे पुन्रुत्थित, स्वर्गारोही, महिमान्वित उद्धारकर्ता के विषय में घोषणा करते हुए आगे बढ़े। यह विधि इतनी प्रभावशाली रही कि इस छोटे से झूण्ड़ ने, ग्यारह लोगों ने (केवल एक ही विश्वासघाती सिद्ध हुआ) समस्त संसार को प्रभु यीशु के लिए उलट–पुलट कर दिया।

प्रेरित पौलुस ने न केवल स्वयं यह विधि अपनायी, परन्तु तीमुथियुस को भी इसका महत्व विदित किया– "और जो बातें तू ने बहुत गवाहों के सामने मुझ से सुनी है, उन्हें विश्वासी मनुष्यों को सौंप दे" (2 तीमुथियुस 2:2)। इसका प्रथम चरण है सावधानी के साथ एवम् प्रार्थनापूर्वक विश्वासयोग्य लोगों का चुनाव। दूसरा है उनके समक्ष उस महिमामय दर्शन का चित्र प्रगट करना, तीसरा है उन्हें अन्य लोगों में से चेले बनाने हेतु बाहर भेजना (मत्ती 28:19)।

जो लोग संख्या और बड़ी भीड़ के पीछे भागते हैं उन्हें यह विधि निरस और अरुचिकर प्रतीत होगी, परन्तु परमेश्वर जानता है कि वह क्या कर रहा है। उसके मार्ग बेहतर मार्ग है। आत्मसन्तुष्ट धर्म–प्रवक्ताओं की फौज के द्वारा जो साध्य नहीं है वह समर्पित शिष्यों

की छोटी–सी झूण्ड़ द्वारा पूरा किया जा सकता है।

जब यह शिष्य प्रभु यीशु के नाम से आगे बढ़ते हैं, तब वे परमेश्वर के वचन में रेखांकित कुछ निश्चित मूल सिद्धान्तों का पालन करते हैं। वे सांप के समान चालाक और कबुतर के समान भोले हैं। कठिन रास्ते पर चलते हुए वे परमेश्वर के द्वारा बुद्धि पाते हैं। अपने बन्धुओं साथ वे दीनता और नम्रता का व्यवहार करते हैं। वे शारीरिक हानि नहीं पहुँचाते, उनकी प्रार्थनाओं से और उनकी अनिर्वापनीय गवाही से लोग डरते हैं।

ये लोग संसार की राजनीति से मुक्त हैं। वे किसी प्रशासन के अथवा राजनीतिक विज्ञान के विरोध में संघर्ष करने का ध्येय नहीं रखते। वे किसी भी प्रशासन के अधीन कार्य कर सकते हैं और जब तक कि वह प्रशासन उन्हें गवाही देने से नहीं रोकता अथवा प्रभु यीशु का इन्कार करने पर बाध्य नहीं करता तब तक वे उस प्रशासन के प्रति वफादार बने रहते हैं। परमेश्वर के वचन के विरोध में वे आज्ञापालन करने से और अधीन रहने से इन्कार करते हैं। परंतु वे किसी भी मानवीय प्रशासन के विरोध में षड़यंत्र नहीं रचते अथवा क्रांतिकारी कदम नहीं उठाते। क्या प्रभु यीशु ने नहीं कहा, "यदी मेरा राज्य इस संसार का होता तो मेरे सेवक उसके लिये लड़ते?" वे स्वर्गीय देश के राजदूत हैं, वे इस संसार में परदेशी और बाहरी हैं।

वे अपने कार्य के प्रति पूर्ण रुप से वफादार हैं। उनकी 'हाँ' का अर्थ है 'हाँ' और 'ना' का अर्थ है 'ना।' लक्ष्य ही साधन को प्रमाणित करता है इस लोकप्रिय झूठ को वे स्वीकार नहीं करते। किसी भी परिस्थिति में भलाई पाने हेतु बुराई का सहारा नहीं लेते। प्रत्येक अपने विवेक का प्रतिरुप है जो पाप करने के बदले मर जाना पसन्द करेगा।

जिस दूसरे सिद्धान्त का वे पालन करते हैं वह यह है कि वे अपने कार्य के लिए स्थानिक कलीसिया को आधार बनाते हैं। वे बाहर संसार में जाकर प्रभु यीशु के लिए आत्माओं की फसल काट कर लाते

हैं, परन्तु इन नये विश्वासियों को वे स्थानिक कलीसिया में भेजते हैं जहाँ वे अपने पवित्र विश्वास में दृढ़ एवम् मजबूत बनते जाते हैं।

शिष्य बड़ी बुद्धिमानी के साथ हर प्रकार के उलझाने वाले रिश्तों से दूर रहते हैं। वे किसी मानवीय संघटना के आदेशों से अपने कार्यों को संचालित करने से इन्कार करते हैं। वे अपने आदेश प्रत्यक्ष स्वर्ग के मुख्यालय से पाते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि वे स्थानिक कलीसिया के विश्वास एवम् समर्थन के बिना ही कार्य करते हैं। इसके विपरीत वे उनके समर्थन और खुशी को उनकी ईश्वरीय बुलाहट की पुष्टी के रुप में ग्रहण करते हैं। परन्तु वे परमेश्वर के वचन के आदेशानुसार और उसके मार्गदर्शनानुसार प्रभु यीशु की सेवा करने का आग्रह करते हैं।

अन्त में, यह शिष्य बड़े नाम या प्रसिद्धी से दूर रहते हैं। वे पृष्ठभूमि में रहना अधिक पसन्द करते हैं। उनका उद्देश्य होता है ख्रीष्ट की महिमा करना और उसे प्रगट करना। वे खुद के लिए महिमा नहीं चाहते। वे युद्धनीति शत्रु पर प्रगट करना नहीं चाहते। वे खामोशी से, किसी तरह का आडम्बर न रचते हुए मनुष्य की मान्यता एवम् निन्दा को नजरअंदाज करते हुए अपने कार्य को पूरा करते हैं। वे जानते है कि उनके श्रम का प्रतिफल पाने का सब–से उत्तम एवम् सुरक्षित स्थान स्वर्ग है।

शिष्यता और विवाह

"क्योंकि कुछ नंपुसक ऐसे है. . . और कुछ नंपुसक ऐसे है, जिन्होंने स्वर्ग के राज्य के लिए अपने आप को नपुंसक बनाया हैं, जो इस को ग्रहण कर सकता है, वह ग्रहण करें" (मत्ती 19:12)।

प्रत्येक शिष्य के मन में एक प्रश्न है कि वह विवाहित जीवन के लिए बुलाया गया है या अविवाहित अवस्था के लिए बुलाया गया है। यह पूर्णतः व्यक्तिगत मार्गदर्शन की बात है। इस विषय में कोई भी व्यक्ति अन्य व्यक्ति के लिए नियम नहीं बना सकता और इस महत्वपूर्ण बात में हस्तक्षेप करना खतरनाक साबित हो सकता है।

पवित्र शास्त्र की सामान्य शिक्षा यह है कि परमेश्वर ने मनुष्य जाति के लिए विवाह की स्थापना की। इस विषय में उसके मन में कई उद्देश्य थे :

(1) विवाह की स्थापना उसने आनन्द और संगति के लिए की। परमेश्वर ने देखा कि "मनुष्य का अकेला रहना अच्छा नहीं है" (उत्पत्ती 2:18)।

(2) मानववंश की पुन्रुत्पत्ति के लिए उसने विवाह की योजना बनायी थी। यह परमेश्वर के आदेश में स्पष्ट रुप से प्रगट होता है (उत्पत्ति 1:28)।

(3) विवाह की रचना उसने परिवार एवम् समाज की रक्षा के लिए, पवित्रता की रक्षा के लिए की थी (1कुरिन्थियों 7:2)।

बाइबल में यह कहीं सूचित नहीं किया गया है कि विवाह पवित्र जीवन के लिए, प्रभु यीशु की सेवा एवम् भक्ति के लिए असंगत एवम् बाधक है। इसके विपरीत हमें यह स्मरण दिलाया जाता हैं कि, "विवाह सबसे आदर की बात समझी जाये" (इब्रानियों 13:4)। ऐसा लिखा गया है कि, "जिसने स्त्री ब्याह ली उसने उत्तम पदार्थ पा लिया" (नीति वचन 18:22)। "एक से दो अच्छे हैं" (सभोपदेशक 4:9), सभोपदेशक के यह वचन विवाह के विषय में भी सत्य प्रमाणित होते हैं। विशेष कर जब वे प्रभु की सेवा में एक साथ लगे हो। उनकी एकता का प्रभाव व्यवस्थाविवरण 32:30 में स्पष्ट रुप से दिखाई देता है, "उनके हजार का पीछा एक मनुष्य करता और उनके दस हजार को दो मनुष्य भगा देते हैं।"

यद्यपि यह सम्पूर्ण मानव जाति के लिए परमेश्वर की इच्छा है, फिर भी यह जरुरी नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक सिद्ध हो। यह प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है फिर भी प्रभु यीशु का शिष्य परमेश्वर की सेवा के लिए इस अधिकार का त्याग कर सकता है, ताकि वह एकाग्रता के साथ प्रभु यीशु की सेवा कर सके। प्रभु यीशु ने यह कहा कि उसके राज्य में ऐसे भी होंगे जो उसके लिए स्वयम् को नपुंसक बना देंगे।

> "क्योंकि कुछ नपुंसक ऐसे हैं जो माता के गर्भ ही से ऐसे जन्में; और कुछ नपुंसक ऐसे हैं, जिन्हें मनुष्य ने नपुंसक बनाया: और कुछ नपुंसक ऐसे हैं, जिन्हों ने स्वर्ग के राज्य के लिए अपने आप को नपुंसक बनाया हैं, जो इस को ग्रहण कर सकता है, वह ग्रहण करे" (मत्ती 19:12)।

यह निश्चित रुप से एक स्वंयस्फूर्त प्रतिज्ञा है जो दो कारणों से व्यक्ति स्वीकार करता है :

(1) अविवाहित रहने के लिए प्रभु यीशु का मार्गदर्शन।

(2) पारिवारिक जीवन की अतिरिक्त जिम्मेदारियों से दूर रह कर खूद को पूर्ण रुप से परमेश्वर को दे देने की इच्छा।

यह अवश्य है कि ईश्वरीय बुलाहट के प्रति दृढ़ विश्वास का होना आवश्यक है (1 कुरिन्थियों 7:7)। केवल इसी के द्वारा शिष्य इस बात को स्पष्ट रुप से जानता है कि परमेश्वर उसे आवश्यक अनुग्रह प्रदान करेगा।

दूसरी बात, यह निर्णय स्वेच्छापूर्वक होना चाहिए। जब कभी धर्म संस्था के द्वारा अविवाहित रहने का निर्णय बलपूर्वक लादा जाता है तब वहाँ अपवित्रता और अनैतिकता का खतरा बराबर बना रहता है।

प्रेरित पौलुस इस बात पर बल देता है कि अविवाहित व्यक्ति अधिक तत्परता के साथ राजा की सेवा में स्वयं को पूर्ण रुप से समर्पित कर सकता है :

> अविवाहित पुरुष प्रभु की बातों की चिन्ता में रहता है कि प्रभु को क्यों कर प्रसन्न रखें। परन्तु विवाहित पुरुष संसार की बातों की चिन्ता में रहता है कि अपनी पत्नी को किस रीति से प्रसन्न रखे (1 कुरिन्थियों 7:32–33)।

इसी कारणवश उसने यह इच्छा प्रदर्शित की कि अविवाहित और विधावायें उसी के समान अविवाहित दशा में रहें (1 कुरिन्थियों 7:7,8)।

जो लोग पहले ही से अविवाहित हैं उनसे वह आग्रहपूर्वक कहता है कि क्योंकि अब समय बाकी है सारी बातों में प्रथम स्थान प्रभु यीशु खीष्ट को प्रगट करने के महान कार्य को दिया जायें, अन्य बातें दूसरे स्थान पर है :

> हे भाईयों, मैं यह कहता हूँ कि समय कम किया गया है, इसलिए चाहिए कि जिनकी पत्नी हो वे ऐसे हो मानो उनकी पत्नी नहीं और रोने वाले ऐसे हो कि मानो रोते नहीं, और आनन्द करने वाले ऐसे हो मानो आनंद नहीं करते, और मोल

> लेने वाले ऐसे हो कि मानो उनके पास कुछ है नहीं। और इस संसार के बरतने वाले ऐसे हो कि संसार ही के न हो ले; क्योंकि संसार की रीति और व्यवहार बदलते जाते हैं (1 कुरिन्थियों 7:29–31)।

इस बात का अर्थ यह अवश्य नहीं है कि मनुष्य अपनी गृहस्थ संबंधी जिम्मेदारियों के प्रति लापरवाह रहे, पत्नी व बच्चों को त्याग दें और मिशनरी बनकर चल दे। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह पारिवारिक जीवन के आनंद और उपभोग के लिए जीवन न बितायें। अपनी पत्नी और बच्चों की आड़ लेकर प्रभु यीशु खीष्ट को वह दूसरा स्थान नहीं दे सकता।

सी.टी. स्टड को यह भय था कि उसकी होने वाली पत्नी कहीं उसके प्रति इतनी आसक्त न हो कि उसके जीवन में प्रभु यीशु के लिए प्रथम स्थान न रहे। इसलिए उसने अपनी पत्नी के लिए एक पद लिखा ताकि वह उसे प्रतिदिन मुखाग्र करें:

> यीशु, मैं तुझसे प्रेम करती हूँ,
> तू मुझको है प्रिय,
> चार्लि से भी अधिक प्रिय,
> और सदा रहेगा।

साम्यवादी व्यक्ति के सामने एक ही लक्ष्य होता है– सम्पूर्ण मानव जाति को अपने विचारों की ओर खींच लेना। पारिवारिक लगाव उनकी दृष्टि से दूसरे स्थान पर है। गॉर्डन आर्नल्ड लोन्सडेल इसका अप्रतिम उदाहरण है। उन्हें सन् 1960 में इग्लैन्ड में रशियन जासूस के रुप में कैद कर लिया गया था। पुलिस को उसके पास उसकी पत्नी का पत्र और छः पृष्ठों का उत्तर प्राप्त हुआ। उसकी पत्नी ने उसें लिखा था, "यह जीवन कितना अन्याय से भरा हुआ है। मैं भली भांति जानती हूँ कि तुम काम कर रहे हो। यह तुम्हारा कर्तव्य है। तुम अपने कर्तव्य के प्रति वफादार हो और सब कुछ पूर्ण विवेक के साथ करने

का प्रयास करते हो। परन्तु मेरी विचारधारा कुछ संकुचित है। मैं एक स्त्री के समान सोचती हूँ और मैं बहुत दुःख उठा रही हूँ मुझे लिखकर भेजो कि तुम मुझसे कितना प्यार करते हो। शायद मुझे कुछ तसल्ली होगी।"

लोन्सडेल ने कुछ इस प्रकार से उत्तर लिखा, "मेरे पास कहने के लिए इतना ही है कि मेरे पास एक ही जीवन है और यह जीवन सुगम नहीं हैं। मैं यह इस तरह बिताना चाहता हूँ कि जब मैं पीछे मुड़कर देखूं तो मुझे लज्जित न होना पडे. . . जल्द ही मैं 39 वर्ष का हो जाऊँगा और कितना कम समय बाकी है!"

पौलुस ने लिखा है, "समय कम है। इसलिए चाहिये कि जिनकी पत्नी हो वे ऐसे हो मानो उनकी पत्नी नहीं।"

दुःख इस बात का है कि जल्दबाजी में और बहकावे में आकर किया गया विवाह प्रभु यीशु के शिष्य के लिए दुःखदायी साबित हुआ है। इसके द्वारा शैतान ने कई युवा शिष्यों को परमेश्वर के मार्ग से दूर हटाया है। कई होनहार सेवकों ने विवाह की वेदी पर अपनी अखंडित सेवकाई की बलि चढ़ा दी है।

परमेश्वर की इच्छा पूर्ण करने के मार्ग में विवाह शत्रु बन कर भी खड़ा रह सकता है। "विवाह परमेश्वर द्वारा दी गयी भेंट है, परन्तु जब वह परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने मे प्रतिबंध लाता है तब उसका गलत उपयोग किया जाता है। हम ऐसे कई स्त्री–पुरुषों के नाम दे सकते है जिन्हें परमेश्वर ने विदेश में सेवकाई करने हेतु निश्चित बुलाहट दी थी, परन्तु वे कभी वहाँ पहुँच नहीं पाये क्योंकि उनके जीवनसाथी उनकी सेवकाई में रुकावट का कारण सिद्ध हुए। आज लाखो आत्माएँ ख्रीष्ट के बिना मर जाती है क्योंकि परमेश्वर की इच्छा के बदले में प्रियजनों को जीवन में प्रथम स्थान दिया गया है।"

जो लोग ईश्वरीय सेवकाई में अग्रस्थान पर है उनके लिए शायद अविवाहित रहना अधिक योग्य होगा।" जो स्त्री–पुरुष ईश्वरीय

सेवा में अग्रगामी है वे अपने जीवन की आवश्यकता के प्रति अनुत्साहित रहें। जीवन के उस यथार्थ आनन्द को 'ना' कहने का साहस उन में हो। उनका कर्तव्य यह है कि वे मसीह के अच्छे सिपाही बनने हेतु कठिनाईयों को सहने के लिए तैयार रहे। वे जीवन के बोझ से दबे न रहे, किसी तरह का दबाव उन्हें उलझायें न रखें। यह एक पवित्र व्यवसाय है, बुलाहट है। किसी विशेष सेवा के लिए दी गयी दीक्षा है।

जो इस बुलाहट को सुन कर उत्तर देते हैं उनके लिए परमेश्वर के पास एक प्रतिफल है। यीशु ने कहा, "मैं तुम से सच सच कहता हूँ . .जिस किसी ने घरों या भाईयों या बहनों या पिता या माता या लडके बालों या खेतों को मेरे नाम के लिए छोड़ दिया है, उस को सौ गुना मिलेगा, और वह अनन्त जीवन का अधिकारी होगा" (मत्तय 19:28,29)।

मूल्य आँकना

प्रभु यीशु ने लोगों को विश्वास का मौखिक अंगीकार करवाने का प्रयास नहीं किया। न ही कभी उसने लोकप्रिय संदेश दे कर अपने पीछे बड़ी भीड़ इकट्ठा करने का प्रयास किया।

सच तो यह है कि जब कभी लोग उसके पीछे भीड़ मचाते थे वह उनकी ओर मुड़कर उनके समक्ष शिष्यता की कठोर शर्तों को रखकर उनको हटाने की कोशिश करता था।

ऐसे ही एक अवसर पर उसने अपने पीछे आनेवाले लोगों को यह चेतावनी दी कि जो कोई उसके पीछे आना चाहे उन्हें प्रथम उसकी कीमत चुकानी पड़ेगी :

> तुम में से कौन है कि गढ़ बनाना चाहता हो, और पहिले बैठकर खर्च न जोड़े, कि पूरा करने की विसात मेरे पास है कि नहीं? कहीं ऐसा न हो, कि जब नेव डालकर तैयार न कर सके, तो सब देखनेवाले यह कहकर उसे ठट्ठों में उड़ाने लगें। कि यह मनुष्य बनाने तो लगा, पर तैयार न कर सका? या कौन ऐसा राजा है, कि दूसरे राजा से युद्ध करने जाता हो, और पहिले बैठकर विचार न कर ले कि जो बीस हजार लेकर मुझ पर चढ़ा आता है, क्या मैं दस हज़ार लेकर उसका सामना कर

सकता हूँ, कि नही? नहीं तो उसके दूर रहते ही, वह दूतों को भेजकर मिलाप करना चाहेगा (लूका 14:28–32)।

यहाँ प्रभु यीशु ने मसीह जीवन की तुलना, भवन के निर्माण कार्य से और युद्ध से की है।

उसने कहा यदि हमारे पास पर्याप्त धन नहीं है तो मीनार बनाना आरम्भ करना केवल मूर्खता है। हमारी दूरदर्शिता के अभाव में हमारा अधूरा रचना कार्य मात्र स्मारक बनकर रह जायेगा।

यह कितना सत्य है कि सार्वजनिक प्रचार सभा के भावपूर्ण वातावरण में प्रभु यीशु के लिए निश्चय करना अलग बात है और प्रतिदिन क्रूस उठा कर प्रभु यीशु के पीछे चलना अलग बात है। मसीही बनने के लिए कोई कीमत नहीं चुकानी पड़ती यह सच बात है। परन्तु ख्रीष्ट के लिए त्याग, समर्पण, अलगाव और दुःखभोग के रास्ते में चलते हुए विश्वासी होने के नाते हमें बड़ी कीमत चुकानी पड़ती हैं। मसीह जीवन की दौड़ आरम्भ करना आसान है परन्तु दिन ब दिन हर परिस्थिती में, सम्पन्नता में, और विपन्नता में, आनंद में, और दुःख में उस दौड़ में आगे बढ़ते चले जाना कठिन है।

संसार हमें अलोचना की दृष्टी से देख रहा है। वह किसी तरह यह जानता है कि मसीही जीवन या तो सब कुछ है या कुछ भी नहीं। जब वह एक समर्पित कट्टर व्यक्ति को देखता है तब हो सकता है कि वह उसका मजाक उड़ाये और खिल्ली उड़ाये, परन्तु अपने अंतर की गहराई में वही व्यक्ति उस मनुष्य का आदर करता है जिसने प्रभु यीशु के लिए अपना सब कुछ त्याग दिया है। परन्तु जब वह एक उदासीन व्यक्ति को देखता है तो उसके मन में तुच्छता के भाव उभर जाते हैं। वह यह कहकर उसका मजाक उड़ाता है कि इसने बांधना तो आरम्भ किया मगर इसे पूरा न कर सका। जब इसने उद्धार पाया तब उसने बड़ा हो –हल्ला मचाया। परन्तु आज वह हमारे ही समान है। वह बड़े वेग से निकल पड़ा परन्तु अब रेंगने लगा है।

इसलिए प्रभु ने कहा, "हमें मूल्य चुकाना है!"

दूसरा उदाहरण एक राजा का दिया जो दूसरे राजा के विरोध में युद्ध पुकारता है क्या यह भला न होगा कि वह इस बात को सोचें कि क्या उसके 10 हजार सिपाहियों के द्वारा वह शत्रु के दुश्मन का पराभव कर सकेगा जो संख्या में उसकी सेना से दुगनी है। क्या यह मूर्खता न होगी कि युद्ध छिड़ने के बाद जब फौज आगे बढ़ रही है, तब वह अपने इरादे पर विचार करें? अब उसके सामने एक ही पर्याय रह जाता है कि वह सफेद झण्ड़ा फहराये और शरणार्थी के झूण्ड को भेजकर बड़ी दीनता के साथ शांति की याचना करें।

मसीही जीवन युद्ध के समान है। संसार, शरीर और शैतान उसके कट्टर दुश्मन हैं। निराशा, खून, यातना, उसके सामने हैं। लम्बे समय तक उसे जागते रहना है और दिन के उजियाले की तीव्र इच्छा मन में धरे रखना है। आँसू, परीक्षायें और परिश्रम उसका भाग है, उसके सामने प्रतिदिन मृत्यु है।

जो कोई प्रभु यीशु के पीछे चलना चाहे वह गतसमनी के गब्बाथा और गुलगुथा का स्मरण करें। और जो कीमत उसे चुकानी है उसका अंदाज़ लगाये। या तो वे प्रभु यीशु के लिए पूर्ण रुप से समर्पित हो जायें या अपमान और लांछन के साथ दुश्मन के आगे झुक जायें।

इन दो उदाहरणों के द्वारा प्रभु यीशु अपने श्रोता को चेतावनी देता है कि उसके शिष्य बनने के लिए वे जल्दबाजी में प्रतिज्ञा न करें। क्योंकि इस मार्ग पर पीड़ा और सताव है। उन्हें पहले मूल्य का अन्दाज़ लगाना है और इसका मूल्य क्या है। अगले वचन में इस प्रश्न का उत्तर दिया गया है :

> इसी रीति से तुम में से जो कोई अपना सब कुछ त्याग न दे, तो वह मेरा चेला नहीं हो सकता (लूका 14:33)।

मुल्य का अर्थ मनुष्य के पास जो कुछ है और वह जो कुछ है

उसका "सर्वस्व"। उद्धारकर्ता के कहने का यही अर्थ था। जो उसके पीछे चलते हैं उनसे वह इससे कम की अपेक्षा नहीं रखता। जो अति सम्पन्न और वैभवशाली था उसने स्वेच्छा से दीनता का मार्ग अपना लिया। तो क्या उसके शिष्य इससे कम मूल्य दे कर मुकुट हासिल कर पायेंगे?

वह निम्नलिखित वचन देकर अपनी शिक्षा को पूरा करता है:

> नमक तो अच्छा है, परन्तु यदि नमक का स्वाद बिगड़ जाए, तो वह किस वस्तु से स्वादिष्ट किया जाएगा (लूका 14:34)।

बाइबल के दिनों में, जिस प्रकार का हम नमक आज हम खाते हैं उस तरह का शुद्ध नमक शायद उपलब्ध नहीं था। उनमें कई अशुद्ध चीजें मिली हुई थी, जैसे, रेत। यह सम्भव था कि नमक का नमकीन स्वाद नष्ट हो जायें। जो अवशेष होता था वह रसहीन निरोपयोगी और फीका होता। वह न तो मिट्टी के रुप में, न खाद्य के रुप में उपयोगी था। उसका उपयोग पगड़ंडी बनाने के लिए किया जाता था। इस तरह, "तुम पृथ्वी के नमक हो; परन्तु यदि नमक का स्वाद बिगड़ जाए, तो वह फिर किस वस्तु से नमकीन किया जाएगा? कि बाहर फेंका जाए और मनुष्यों के पैरों तले रौंदा जाए" (मत्ती 5:13)।

इस उदाहरण का अर्थ स्पष्ट है। मसीही जीवन का एक प्रधान उद्देश है, अपने जीवन के द्वारा, जो पूर्ण रुप से परमेश्वर के लिए उण्ड़ेला गया है परमेश्वर की महिमा करना। मसीही व्यक्ति जब इस पृथ्वी पर धन संचय करता है, अपने चैन और आराम के लिए प्रयोजन करता है, संसार में अपना नाम कमाने की कोशिश करता है। अपना जीवन और अपनी बुद्धी इस व्यर्थ संसार में दांव पर लगाकर अपने लिए नाम कमाने की कोशिश करता है तब तो अपना स्वाद खो बैठता है। यदि एक विश्वासी अपने जीवन का प्रधान उद्देश खो देता है, तो वह अपने जीवन का सर्वस्व खो बैठता है। वह न तो उपयोगितावादी है न ही सजावट के योग्य। उसका अंत इस बेस्वाद नमक के समान

है जो मनुष्य के उपहास, उसकी तुच्छता एवम् निन्दा के द्वारा उसके पाँव तले रौंदा जाता है।

अंतिम शब्द इस प्रकार है :

"जिसकें कान हों वह सुन ले कि आत्मा कलीसियाओं से क्या कहता है।"

जब कभी प्रभु यीशु ने कठोर शब्दों से उलाहना दी तब उसने अन्त में यही शब्द कहे। शायद वह जानता था कि सभी लोग उसके वचनों को ग्रहण नहीं करेंगे। वे उसके लिए बहाना बनाने की कोशिश करेंगे, उसके मांगों की तीव्रता को कम करने की कोशिश करेंगे।

परन्तु वह यह भी जानता था कि कुछ लोग उसके वचनों को खुले हृदय से ग्रहण करेंगे।

सो उसने द्वार खोल रखा है! "जिसके कान हों वह सुन ले। जो सुनना चाहते हैं वे वही लोग हैं जो कीमत का अन्दाजा लगा चुके हैं और वे कहते हैं।

यीशु के पीछे मैं चलने लगा,
गर कोई मेरे साथ न आये उसके पीछे मैं चलूंगा,
संसार है पीछे, सलीब है आगे,
न लौटूंगा, न लौटूंगा।

शहादत की छाया

जब वास्तव में कोई व्यक्ति प्रभु यीशु की ओर समर्पित हो जाता है तब उसके लिए यह महत्वपूर्ण नहीं होता कि वह मरे या जीवित रहे। प्रभु की महिमा हो, केवल यही बात मायना रखती है।

यदि आप *'जॉन और बेट्टी स्टॅम की विजय'* नामक पुस्तक पढ़ेंगे, तब आप पायेंगे कि सम्पूर्ण पुस्तक में केवल एक ही बात का उल्लेख पाया जाता है–"पर. . . मसीह की बड़ाई मेरी देह के द्वारा सदा होती रही है, वैसा ही अब भी हों, चाहे मैं जीवित रहूँ वा मर जाऊँ" (फिलिप्पियों 1:20)।

यही विचार जिम इलियट के लेखों में दोहराया गया है। जब वह न्हिटन कॉलेज का छात्र था तब उसने अपनी डायरी में इस प्रकार लिखा, "मैं ऑकस के लिए मरने हेतु तैयार हूँ"।

अन्य किसी स्थान में उसने लिखा है, "पिता, मेरा जीवन ले ले, हाँ, यदि तेरी इच्छा हो तो मेरा रक्त भी ले, तेरी पवित्र अग्नि से उसे व्याप्त कर। मैं उसे सम्भालकर नहीं रखूंगा, क्योंकि उसे रखने का अधिकार मुझे नहीं है। उसे ले ले प्रभु, पूरी तरह से ले ले। मेरे जीवन को इस संसार के लिए अर्पण के रुप में उण्ड़ेल दे। खून ही इसका मूल्य चुका सकता है, क्योंकि वह तेरी वेदी के सामने बहता है।"

परमेश्वर की निकटता में जीवन व्यतित करते हुए कई मसीही वीर इस स्थान पर पहुँचे हैं। उन्होंने जान लिया हैं कि, "जब तक गेहूँ का दाना भूमि में पड़कर मर नहीं जाता, वह अकेला रहता है, परन्तु जब मर जाता है, तो बहुत फल लाता है" (यूहन्ना 12:24)। गेहूँ का दाना बनने की चाह वे रखते हैं।

इसी बात की शिक्षा उद्धारकर्ता ने अपने शिष्यों को दी, "क्योंकि जो कोई अपना प्राण बचाना चाहेगा वह उसे खोएगा, परन्तु जो कोई मेरे लिए अपना प्राण खोएगा वही उसे बचाएगा" (लूका 9:24)।

जितना अधिक हम इस विषय पर सोचते हैं, उतना ही अधिक वह विचारणीय प्रतीत होता है।

हमारे जीवनों पर हमारा कोई अधिकार नहीं। जिसने अपने रक्त की कीमत चुका कर इस जीवन को मूल्य प्रदान किया उसी का उस पर अधिकार है। जो वस्तु दूसरों की है, क्या हम उससे लिपटे रहें? सी.टी. स्टड इस प्रश्न का उत्तर स्वयम् प्रस्तुत करते हैं :

> प्रभु यीशु मेरे लिए मरा इस बात को मैंने जाना था, परन्तु इस बात को मैं समझ नहीं पाया था कि यदि वह मेरे लिए मर गया तो मेरा अब खुद पर कोई अधिकार नहीं रहा। छुटकारे का अर्थ है दुबारा मोल लेना, सो यदि मैं उसका हूँ तो जो मेरा नहीं है उसे रखने के कारण मैं चोर सिद्ध होता हूँ, या फिर मुझे सब कुछ परमेश्वर को सौंप देना चाहिए।

दूसरी बात, प्रभु यीशु हमारे समय में न आये तो मृत्यु तो हमें आयेगी ही। क्या परमेश्वर की सेवा में मर जाना बेहतर है या किसी दुर्घटना के शिकार होकर? क्या जिम इलियट ने ठीक ही नहीं कहा, "जो हम खो नहीं सकते उसे पाने लिए जो वह नहीं रख सकता उसे दे देता है वह व्यक्ति मूर्ख नहीं है"।

तीसरी बात, यदि प्रभु यीशु हमारे लिए मर गया तो जो कुछ हम उसके लिए कर सकते हैं वह यह कि हम उसके लिए मर जायें। यह

एक निर्विवाद तर्क है। यदि सेवक अपने स्वामी से बड़ा नहीं है तो हमें क्या अधिकार है कि हम अपने स्वामी प्रभु यीशु से अधिक सुख पाकर स्वर्ग में जायें। इसी विचार ने **स्टड** को यह प्रेरणा दी कि यदि प्रभु यीशु परमेश्वर है और मेरे लिए मर गया है तो उसके लिये मैं कौन सा बड़ा बलिदान कर सकता हूँ।

अन्त में, यदि हमारे जीवन में त्याग करने के द्वारा हमारे साथियों को अनंत जीवन की आशिष मिल सकती है तो अपने जीवन क़ो थामें रहना घोर अपराध है। लोग मेडिकल संशोधन के लिए अपना जीवन बलिदान करते हैं। जलते हुए घर से अपने प्रियजनों को बचाने के लिए लोग अपनी जान तक दे देते हैं। अपने शत्रु की सामर्थ्य से अपने देश की रक्षा करने हेतु अन्य कुछ लोग युद्ध में मर जाते हैं। मनुष्य के जीवन के लिए हमारी कीमत क्या है? क्या हम एफ. डब्लू. एच. मायर्स के साथ यह कह सकते हैं:—

मै ऐसे ही लोगों को वहाँ देखता हूँ,
जिन्हें जीतना था, वे बंधुवाई—में हैं,
जिन्हें राजा होना था, वे दास हैं,
अपनी एक ही आशा के विषय में वे कहते हैं,
मात्र दिखावे से ही वे सन्तुष्ट हैं।

फिर मेरे हृदय से जाग उठती है एक इच्छा,
नरसिंगे की आवाज सी गूँज उठती है मुझमें
इन्हें बचाने के लिये! उनके उद्धार के लिए
नाश हो जाऊँ;
उनके जीवन के लिए मर जाऊँ,
उनके लिए समर्पित हो जाऊँ!

यह आवश्यक नहीं कि सभी शहीद के रुप में अपने प्राण न्योछावर कर दें। भाला और फाँसी और शूलदण्ड़ कुछ ही चुने हुए लोगों के लिए सुरक्षित रखे गये हैं। परन्तु हममें से हरेक विश्वासी शहीद की विचारधारा, शहीद की उमंग, शहीद की आत्मा, शहीद का

समर्पण; अपने हृदय में उत्पन्न कर सकता है। हममें से प्रत्येक विश्वासी उनके समान जीवन बीता सकते हैं जिन्होंने खीष्ट के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया है।

सुख आये, दुःख आये, क्रूस हो या मुकुट
मेघधनुष हो या मेघ गर्जन।
सब हाल में मैं अपने प्राण को और
देह को प्रभु के सामने बिछा देता हूँ,
ताकि प्रभु मुझे इस्तेमाल करें।

सच्ची शिष्यता का प्रतिफल

जो जीवन प्रभु यीशु के हाथों में सौंपा गया है वह उसका प्रतिफल है। प्रभु यीशु के पीछे चलने में आनंद है, खुशी है, यही वास्तविक जीवन है।

प्रभु यीशु ने बारम्बार कहा, "जो अपने प्राण बचाता है वह उसे खोएगा; और जो मेरे कारण अपना प्राण खोता है, वह उसे पाएगा।" उसके यह वचन चारों सुसमाचार की पुस्तकों में बार–बार दोहराया गया है (मत्ती 10:39,16:25; मरकुस 8:35; लूका 9:24; 17:33; यूहन्ना 12:25)। यह बारबार क्यों दोहराया गया है? क्योंकि वह मसीह जीवन के मूल सिद्धांत को प्रस्तुत करता है कि जो जीवन को अपने आपके लिए थामें रहता है, वह अपना जीवन खो देता है, परन्तु जो उसके लिए अपने जीवन को उण्ड़ेल देता है, वह अपने जीवन को पा लेता है, वह उद्धार पाता है, आनन्द पाता है और अनन्तकाल के लिए जीवन पाता है।

उदासीन मसीही के जीवन का अस्तित्व दुःखदायी होता है। परमेश्वर की समस्त आशिषों का आनंद उठाने का निश्चित मार्ग है पूर्ण रुप से परमेश्वर के प्रति समर्पित हो जाना।

प्रभु यीशु के सच्चे शिष्य बनने का अर्थ है, उसका दास बने रहना और उसकी सेवा में पूर्ण स्वतंत्रता का लाभ उठाना। जो बड़े आनंद के साथ यह कहते हैं कि मैं अपने स्वामी से प्रेम करता हूँ और उसे छोड़कर मैं नहीं जाऊँगा, उसके कथन में स्वतंत्रता है।

शिष्य उन बातों के दबाव में नहीं रहता, जो व्यर्थ है, जो मिटती जा रही है। वह अनन्तकाल की बातों के प्रति सचेत रहता है और हडसन टेलर के समान थोड़ी बातों की चिन्ता करने का आनन्द उठाता है।

लोगों में अज्ञात होने के बावजूद भी वह सुप्रसिद्ध है। वह लगातार मरता रहता है, फिर भी वह जीवित है। उसे ताड़ना मिलती है, परन्तु वह मारा नहीं जाता, वह दुःख में भी आनंद मनाता है। वह स्वयम् दीन और दरिद्र है, परन्तु कईयों को धनी बनाता है; उसके पास कुछ नहीं है, परन्तु सब कुछ उसका है (2 कुरिन्थियों 6:9,10)।

यदि हम कहते हैं कि सच्चे शिष्य का जीवन इस संसार में सर्वाधिक संतुष्टी का जीवन है तो हम यह उसी निश्चय के साथ कह सकते हैं कि आने वाले युग में उसका प्रतिफल सबसे बड़ा होगा। "मनुष्य का पुत्र अपने स्वर्गदूतों के साथ अपने पिता की महिमा में आएगा, और उस समय वह हर एक को उसके कामों के अनुसार प्रतिफल देगा (मत्ती 16:27)। इसलिए, वास्तव में धनी व्यक्ति वही है जो येल के बोर्डन के साथ यह कह सके, "प्रभु यीशु, जहाँ तक मेरे जीवन का प्रश्न है, मैं अपने हृदय के सिंहासन पर तुझे बिठाता हूँ। मुझे तेरी इच्छा के अनुसार बदल दे, शुद्ध कर, इस्तेमाल कर।"

वह नहीं चाहता था

"वह नहीं चाहता था कि कोई नाश हो;
यीशु जो महिमा में व्याप्त था,
उसने हमारा दीन पतित संसार देखा,
उसने हमारे दुःखों पर तरस खाया,
उसने अपने जीवन को हमारे लिये,
उण्ड़ेल दिया, अद्‌भुत प्रेम!
वे नाश होते हैं, नाश होते हैं,
हमारे मार्गों में भीड़ मचाते हैं,
भारी बोझ से हृदय घायल है;
यीशु बचाएगा, उन्हें कौन बताएगा,
दुःख और निराशा से उन्हें कौन उठायेगा।

"वह नहीं चाहता कि कोई नाश हो,
हमारे दुःख और दर्द के साथ,
हमारी देह को धारण कर, खोए हुओं को,
खोजने वह आया,
दुखियों के आँसू पोंछने आया,
दुःख और लज्जा से टूटे हुए,
हृदय को चंगा करने आया,
वे नाश होते हैं, नाश होते हैं,
कटनी का समय बीतता जाता है,
मजदूर कम है, रात निकट है,
यीशु बुलाता है, जल्दी करो कटनी,
आत्माओं को पाओगे,
अनमोल आत्माओं को अपने लिये।

बहुतेरे भागते खुशियों के पीछे,
यीशु के पीछे बहुत कम आते,

संसार के लिए समय गँवाते हैं,
प्रभु के लिए समय नहीं है।
भूखों को खिलाने,
खोए हुओं को अनन्तकाल का देने आनंद,
प्रभु के लिए समय नहीं है,
वे नाश होते हैं, नाश होते हैं,
सुनो, कैसे पुकारते हैं हमें,
उस तारणहार को लाओं,
उसकी खबर सुनाओ,
हम थके मांदे और बोझ से दबे,
हमारी आँखे थकी है रोते–रोते।

"वह नहीं चाहता की नाश हो,
क्या मै उसके पीछे चलता हूँ,
और एक आत्मा नर्क की ओर बढ़ती है,
तो क्या मैं चैन से रहता हूँ,
और मेरी सहायता के बगैर,
वे नाश होते है! नाश होते है!
तू नहीं चाहता था प्रभु,
क्षमा कर, हमें प्रेरणा दे,
फिर नया बना, सांसारिकता को मिटाकर,
हमें सहाय कर, ताकि हम अनन्तकाल के मूल्यों को,
अपने आगे देखें।

–लूसी आर. मेयर

आपका धन कहाँ है?

आपका धन कहाँ है?

"पृथ्वी पर अपने लिए धन इकट्ठा न करो. . . क्योंकि जहाँ तेरा धन है, वहाँ तेरा मन भी लगा रहेगा" (मत्ती 6:19–21)।

मन वहीं लगा रहेगा जहाँ धन है। यह धन या तो सेफ डिपोजिट–बॉक्स में होगा या फिर स्वर्ग में। दोनों स्थान में यह धन नहीं रखा जा सकता।

किसी ने कहा है, "मसीही व्यक्ति या तो सम्पत्ति त्याग देता है या फिर उसके पीछे जाता है।"

प्रभु यीशु ने अपने पीछे आनेवालों को इस पृथ्वी पर धन संग्रहित करने से मना किया। वह चाहता था कि उनका मन स्वर्ग की ओर लगा रहे।

परन्तु प्रभु यीशु की यह शिक्षा हमें आज आदिम और आवश्यकता से अधिक कठोर प्रतीत होती है। क्या वह वास्तव में यह कहना चाहता था? क्या हमारी अक्ल हमें यह नहीं सिखाती कि हमें अपने बुढ़ापे के लिये उचित प्रबंध करने की जरुरत है? क्या वह नहीं चाहता कि हम दूरदर्शी व बुद्धिमान हो और वर्षाकाल के लिये धन संचय करें ताकि अपने प्रियजनों की देखभाल कर सकें।

यह अति गंभीर प्रश्न है, जिनका प्रामाणिकता के साथ एवम् पूर्ण

रुप से सुलह करने का प्रयास उन सभी मसीही विश्वासियों को करना है जो यीशु मसीह के सच्चे शिष्य होने का दावा करते हैं।

इन सवालों का उत्तर क्या है? विश्वासी के जीवन में धन के विषय को लेकर बाइबल क्या शिक्षा प्रदान करती है? क्या निजी धन इकट्ठा करना गलत है? मसीही विश्वासी के जीवन का मापदण्ड़ क्या है?

व्यापार में तत्पर

सर्वप्रथम, हमें इस बात से सहमत होना होगा कि बाइबल हमें पैसा कमाने से मना नहीं करती। अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये प्रेरित पौलुस तम्बू बनाया करता था (प्रेरितों के काम 18:1–3, 2 थिस्सलुनीकियों 3:8)। वह थिस्सलुनीकियों को शिक्षा देता है कि यदि कोई काम करना न चाहे तो खाने भी न पाए। यह निर्विवाद है कि बाइबल इस बात पर बल देती है कि मनुष्य अपनी तथा अपने परिवारजनों की जरुरतों के लिये मन लगाकर काम करें।

सो क्या हम ऐसा कह सकते हैं कि मसीही व्यक्ति बहुतायत के साथ धन कमाने के प्रयास में लगा रहे? नहीं, वह यथासम्भव धन कमा सकता है, परन्तु निम्नलिखित बातों का ध्यान रखते हुए :

(1) उसे अपने काम को परमेश्वर के कामों से अधिक महत्व देने की अनुमति नहीं है। उसका प्रधान कर्तव्य परमेश्वर के राज्य एवम् उसकी धार्मिकता को प्रथम खोजना है (मत्ती 6:33)। उसके व्यापारिक तनाव के कारण आराधना और सेवा प्रभावित नहीं होनी चाहिये।

(2) उसके पारिवारिक उत्तरदायित्वों की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए (1 तीमुथियुस 5:8)। सामान्यतया, जब मनुष्य अधिक धन कमाने में

लग जाता है, तब वह अपनी पत्नी तथा बच्चों के लिये पर्याप्त समय नहीं दे पाता। उन्हें भरपूर धन देकर, ऐशोआराम के साधन देकर इस बात की भरपाई नहीं की जा सकती, यह बातें मात्र उनके आत्मिक एवं नैतिक गिरावट का कारण बन सकती है। उन्हें तगड़े बैंक (खाता) अकाउण्ट के बजाए, धर्मी पति और पिता के संगति तथा मार्गदर्शन की जरुरत हैं।

(3) वह प्रतिष्ठित व्यापार के द्वारा अपना धन कमाए (नीतिवचन 10:16) इस बात में कोई संदेह नहीं। मसीही व्यक्ति को अपना समय और श्रम ऐसे वस्तु के उत्पादन, वितरण और विज्ञापन में व्यय नहीं करना चाहिए जिसके द्वारा सामाजिक स्वास्थ्य को हानि पहुँच सकती है और समाज में नैतिक मूल्यों का पतन हो सकता है। उसी तरह मसीही व्यक्ति को उन लोगों के मनोरंजन में समय नहीं गँवाना है जो नरक के मार्ग में आगे बढ़ रहे हैं। जो भी काम हो वह रचनात्मक हो तथा आम लोगों के हितों से संबंधित हो।

(4) उसे इस बात का भी ध्यान रखना है कि जो भी धन वह कमाता है वह प्रामणिकता के साथ कमाएँ (नीतिवचन 20:17)। हो सकता है कि उसका व्यापार प्रतिष्ठित हो, परन्तु उसके मार्ग टेढ़े हो।

(अ) व्यवसाय कर के भुगतान में बेईमानी (नीतिवचन 12:22)।

(ब) नाप तोल में बेईमानी (नीतिवचन 11:1)।

(क) इन्स्पेक्टर को रिश्वत देना (नीतिवचन 17:23)।

(ड) वस्तुओं में भिन्नता न होते हुए भी उन वस्तुओं के उत्पादन में भिन्नता का विज्ञापन प्रस्तुत करना (नीतिवचन 20:6)।

(इ) व्यय के हिसाब में गड़बड़ी (नीतिवचन 13:5)।

(ई) बाजार में अथवा स्टॉक एक्सचेन्ज में सट्टा लगाना। यह एक अलग तरीके का जुआ है (नीतिवचन 13:11)।

(फ) अपने नौकरों को कम से कम मजदूरी देना (नीतिवचन 22:16)। इसी गलत प्रथा के विरोध में याकूब अपनी पत्री में लिखता है, "देखो, जिन मजदूरों ने तुम्हारे खेत काटे उनकी वह मजदूरी जो तुम ने धोखा देकर रख ली है चिल्ला रही है, और लवनेवालों की दोहाई सेनाओं के प्रभु के कानों तक पहुँच गई है।"

(5) मसीही व्यक्ति चाहे जितना धन कमा सकता है, परन्तु उसे अपने स्वास्थ्य की उपेक्षा नहीं करना चाहिये। उसका शरीर पवित्र आत्मा का मन्दिर है (1 कुरिन्थियों 6:19) धन की प्राप्ति के लिए उसे अपने स्वास्थ्य को नहीं बिगाड़ना चाहिए।

(6) अंतिम बात यह है कि मसीही व्यक्ति यथासंभव धन कमा सकता है, परन्तु उसे लालची नहीं होना चाहिये, वह सम्पत्ति का दास न बनें (मत्ती 6:24)। धन कमाना गलत नहीं है, परन्तु धन से मोह रखना गलत है (भजन संहिंता 62:10)।

सारांश रुप में, हम यह कह सकते हैं कि मसीही व्यक्ति जितना चाहे उतना धन कमा सकता है, बशर्ते वह प्रथम स्थान परमेश्वर को दें, अपने पारिवारिक कर्तव्यों को निभाये, रचनात्मक कार्य करें, प्रामाणिक व्यवहार रखें, अपने स्वास्थ्य की रक्षा करें और लालच न करें।

धन रखना, परंतु उसका मोह न रखना

दूसरा प्रश्न जो हमें सुलझाना है वह यह है कि क्या धन का संचय करना अयोग्य बात है? नया नियम बड़ी दृढ़ता के साथ इस प्रश्न का उत्तर देता है—हाँ।

बाइबल हमें धनवान होने के कारण दोषी नहीं ठहराती। विरासत में सम्पत्ति पाकर मनुष्य रातोंरात धनसम्पन्न हो सकता है। परन्तु इस धन का उपयोग हम किस तरह करें इस विषय मे बाइबल बहुत कुछ कहती है :

(1) सबसे पहली बात यह है कि हम परमेश्वर के भण्ड़ारी है (1 कुरिन्थियों 4:1)। इसका अर्थ है जो कुछ हमारे पास है वह परमेश्वर का है हमारा नहीं। हमारा उत्तरदायित्व है कि हम इस धन को परमेश्वर की महिमा के लिये इस्तेमाल करें। दस प्रतिशत् परमेश्वर का है और बाकी नब्बे प्रतिशत हमारा है, यह धारणा नये नियमानुसार गलत है। सब कुछ परमेश्वर का है।

(2) दूसरी बात यह है कि हमें वस्त्र और भोजन में सन्तुष्ट रहना है। "यदि हमारे पास खाने और पहिनने को हो तो इन्हीं पर संतोष करना चाहिए" (1 तीमुथि 6:8)। यहाँ पहिनने का अर्थ ओढ़ना है, छत

है। यहाँ किसी भी आश्रय या छत का और वस्त्र का अभिप्राय है। इस वचन का अर्थ यह है कि हमें जीवनाश्यक वस्तुओं में, अर्थात् अन्न, वस्त्र और निवास में संतोष रखना हैं। बाइबल हमें इस बात की अनुमति देती है कि निवास के रुप में हम उससे बेहतर स्थान पाएँ (मत्ती 8:20)।

जो मसीही व्यक्ति व्यापार में लगा है उसे चल–अचल पूँजी की आवश्यकता होती है ताकि वह अपना व्यापार आसानी से चला सकें। उसे कच्चे माल की खरीदी के लिये, अपने नौकरों की मजदूरी देने के लिये, तथा अन्य खर्चे के लिये पैसों की जरुरत होती है। इस प्रकार आवश्यक धन रखने के लिये बाइबल हमें नहीं रोकती है।

(3) हम जहाँ तक संभव हो मितव्ययी हो। पाँच हजारों को भोजन खिलाने के पश्चात यीशु ने अपने शिष्यों को बचा हुआ भोजन उठाने कहा था (यहून्ना 6:12)। उसका उदाहरण हमारे सन्मुख है कि हम वस्तुओं की व्यर्थ बरबादी न करें।

हम कई अनावश्यक वस्तुएँ खरीदते हैं। विशेषकर खिसमस के अवसर पर हम काफी धन अयोग्य इनामों पर खर्च कर देते हैं जो अन्त में फेंक दिया जाता है या अटारी पर पड़ा रहता है जिसका कोई उपयोग नहीं होता।

सस्ती चीजों से हमारा काम चल सकता है फिर भी हम महँगी वस्तुएँ खरीदते हैं। (यह हमेशा सच नहीं कि सस्ती वस्तुएँ सदा ही अच्छी हो। हमें कीमत, गुण, तथा समय की बचत इत्यादि बातों पर भी ध्यान देना चाहिये।)

हमें अपने जीवन को अनुशासित करना है कि राह दिखती हर वस्तु की खरीदारी का मोह हम टालें, और परमेश्वर के पुत्र के निमित्त मित्यव्ययी स्वभाव की आदत डाल दें।

(4) हमारी आवश्यकता से अधिक जो कुछ हमारे पास है वह सब हम परमेश्वर के कार्य में व्यय करें (1 तीमुथियुस 6:8)। स्मरण रहें

कि सब कुछ उसका है। हम उसके भण्ड़ारी है। हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी सम्पूर्ण सामर्थ के साथ उसके कार्य को इस पृथ्वी पर बढ़ावा दें।

कुछ लोग इस बात का यह कह कर विरोध करेंगे कि भोजन, वस्त्र और आश्रय की सुविधा छोड़ बाकी सारा धन परमेश्वर के कार्य में लगा देना मूर्खता है, अदूरदर्शिता है।

हमारे पास एक व्यक्ति का विवरण है जिसने ऐसा किया। वह एक विधवा भी जिसने अपनी दो दमड़ियाँ दानपात्र में ड़ाल दी। प्रभु यीशु ने उसे फटकारा नहीं। उसने कहा, "मै तुम से सच सच कहता हूँ कि इस कंगाल विधवा ने सब से बढ़कर डाला है। क्योंकि उन सब ने अपनी अपनी बढ़ती में से दान में कुछ डाला है, परन्तु इसने अपनी छटी में से अपनी सारी जीविका डाल दी है" (लूका 21:3,4)।

(5) हमें पृथ्वी पर धन न इकट्ठा करने के विषय में कहा गया है। परमेश्वर के वचन स्पष्ट एवम् अभ्रान्त हैं।

> अपने लिये पृथ्वी पर धन इकट्ठा न करो, जहाँ कीड़ा और काई बिगाड़ते हैं और जहाँ चोर सेंध लगाते और चुराते हैं। परन्तु अपने लिये स्वर्ग में धन इकट्ठा करों, जहाँ न तो कीड़ा न तो काई बिगाड़ते हैं और जहाँ चोर न सेंध लगाते, न चुराते हैं। क्योंकि जहाँ तेरा धन है वहाँ तेरा मन भी लगा रहेगा" (मत्ती 6:19–21)।

कुछ लोगों के लिये यह वचन ऐसे होंगे जैसे बाइबल न हो। हम विश्वास करते हैं कि वे प्रभु यीशु के वचन हैं। हम विश्वास करते हैं कि वे ईश्वर की प्रेरणा से लिखे गये हैं। परन्तु हम सोचते हैं कि वे हम पर लागू नहीं हैं। हम उनका पालन नहीं करतें। और इस कारण वे वैसे ही है मानो जैसे यीशु ने उन्हें कभी न कहा हो।

परन्तु सत्य तो यह है कि पृथ्वी पर धन इकट्ठा करना पाप है।

वह प्रत्यक्ष रुप में परमेश्वर के वचन के विरोध में है। जिसे हम चालाकी या दूरदर्शिता कहते हैं वह वास्तव में बलवा करने की प्रवृत्ति है, पाप है।

और यह भी सत्य है कि जहाँ हमारा धन है वहाँ हमारा मन भी होगा। एक समय की बात है जब डॉ. जॉनसन् को एक विलासितापूर्ण स्थान की सैर कराने ले जाया गया। उसने वह महल देखा, सुंदर भूमि देखी। फिर उसने मुड़कर अपने मित्रों से कहा, "ये सारी बाते हमें प्राण त्यागना मुश्किल कर देती है।"

(6) अन्त में, हमें भविष्य के लिये परमेश्वर पर निर्भर रहना है। परमेश्वर अपने लोगों को विश्वास के जीवन के लिये बुलाता है, वह चाहता है कि हम उस पर निर्भर रहें। वह हमें प्रार्थना करना सिखाता है, "हमारी प्रति दिन की रोटी तू आज हमें दे" (मत्ती 6:11)। माना की सत्य कहानी के द्वारा वह हमें शिक्षा देता है कि हमारी वर्तमान आवश्यकताओ के प्रबंध के लिये हम परमेश्वर की ओर देखें (निर्गमन 16:14–22)। वह स्वयम् हमारी सुरक्षा है। हमें इस संसार के टूटे नरकटों का सहारा नहीं लेना चाहिये।

यह परमेश्वर की अपने लोगों के लिये इच्छा है कि हम इस बात को जान लें कि हम उसके भण्डारी है और जो कुछ हमारे पास है उसका है। हमें जीवन की आवश्यक जरुरतों के प्रबन्ध से सन्तुष्ट रहना चाहिये। हम यथासंभव हाथ रोक कर खर्च करने वाले हो। हमारी आवश्यकताओं के प्रबंध से अधिक जो कुछ है वह सब हमें परमेश्वर के कार्य में लगाना हैं। हम अपना धन इस पृथ्वी पर संग्रहित न करें। भविष्य के लिये हम उसी पर विश्वास करें।

उसमें हानि क्या है?

मसीही व्यक्ति के लिये धन संग्रहित करना, सम्पत्ति का संचय करना गलत क्यों है?

(1) पहला यह है कि क्योंकि बाईबल ऐसा कहती है इसलिये यह गलत है (मत्ती 6:19); यही पर्याप्त कारण है। आदम और हवा ने भले और बुरे के वृक्ष का फल खाने में क्या गलती की? क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें मना किया था। यही हम सभों के लिये उत्तर है।

(2) यह गलत है क्योंकि इसके द्वारा वर्तमान संसार की आत्मिक जरुरतों की ओर नज़रअंदाज किया जाता है (नीतिवचन 24:11,12)। लाखों स्त्री और पुरुषों ने, लड़कों और लड़कियों ने परमेश्वर के अनुग्रह का सुसमाचार नहीं सुना है। लाखों के पास बाइबल या सुसमाचार का पर्चा नहीं हैं। लाखों लोग परमेश्वर के बिना खीष्ट के बिना और आशा के अभाव में मर रहे हैं।

यह एक आत्मिक भ्रातृहत्या का रुप है कि हमारे पास सुसमाचार के पर्याप्त साधन होने के बाद भी हम उनका उपयोग नहीं कर रहे हैं (यहेज्केल 33:6)।

यह धनसंचय करनेवाले व्यक्ति के हृदय में परमेश्वर के प्रेम के

अभाव की गवाही देता है। क्योंकि, "पर जिस किसी के पास संसार की संपत्ति हो और वह अपने भाई को कंगाल देख कर उस पर तरस खाना न चाहे, तो उसमें परमेश्वर का प्रेम क्योंकर बना रह सकता है?" (1 यूहन्ना 3:17)।

पुराने नियम में दो भूखे कोढ़ियों के विषय में बताया गया है जिन्हें भरपूर भोजन मिला। उन्होंने एक डेरे में घुसकर खाया पिया और यह आनंद का समाचार वे अन्य लोगों को देने निकले (2 राजा 7,9)। हम जो अनुग्रह के समय में रहते हैं, क्या उन नियमशास्त्राधीन कोढ़ियों से कम तरस रखते हैं?

(3) तीसरी बात, पैसों का ढ़ेर लगाना इस कारण गलत है क्योंकि दूसरी ओर संसार के पास भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का भारी अभाव पाया जाता है (नीतिवचन 3:27,28,11:26)। लूका रचित सुसमाचार के 16 वे अध्याय में वर्णित धनवान व्यक्ति अपने फाटक पर पड़े भिखारी के प्रति लापरवाह था। यदि वह पड़दा हटाकर खिड़की के बाहर देखता तो उसे वास्तविक जरुरत का आभास होता, अपने धन का व्यय करने का उचित मार्ग उसे दिखायी देता। परन्तु उसने इस बात की परवाह नहीं की।

इस संसार में कई लाजरस हैं। वे हमारे फाटकों में पड़े है और परमेश्वर हम से कहता है, "तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख" (मत्ती 22:39)।

आज यदि हम उसकी वाणी को अनसुना करते हैं तो एक दिन वह हमसे कहेगा, "मैं भूखा था और तुमने मुझे खाने को नहीं दिया, मैं पियासा था, और तुम ने मुझे पानी नहीं पिलाया...तुम ने जो इन छोटे से छोटों में से किसी एक के साथ नहीं किया, वह मेरे साथ भी नहीं किया" (मत्ती 25:42,45)।

(4) मसीही व्यक्ति के लिये पृथ्वी पर धन संग्रहित करना

अयोग्य है क्योंकि इसके द्वारा परमेश्वर के शत्रुओं को परमेश्वर की निंदा करने का अवसर प्राप्त होता है (रोमियों 2:24)। इसी कारण वॉल्टेयर ने कहा, "पैसों के विषय में कहा जाए तो, सभी व्यक्ति एक धर्म का पालन करते हैं।"

कई उद्धार न पाये हुए लोग प्रभु यीशु मसीह की शिक्षा से परिचित है। वे जानते हैं कि उसने कहा है कि अपने पड़ोसी से प्रेम रखो। वे देखते हैं कि जो लोग मसीह के अनुयायी होने का दावा करते हैं वे आलिशान घरों में रहते हैं, कारों में घूमते हैं, महँगे वस्त्र पहनते हैं और होटलों में खाते–पीते हैं।

यह कलीसिया के लिये जाग उठने का समय है। संसार के विद्वान और ज्ञानवान लोगों से वार्तालाप कीजिये। वे मसीही लोगों की आलोचना करते हैं। वे प्रभु यीशु के सिद्धान्तों के विरोधी नहीं है, वे मण्डली की धनदौलत का, और दरिद्रता से आक्रस्त संसार के धनी मसीही लोगों का विरोध करते हैं।

(5) अविश्वासियों पर होने वाले इसके प्रभाव से हम चिन्तित है ही, परन्तु मसीही जवानों पर हो रहे प्रभाव का हम विचार कर रहे हैं।

वे अपने वरिष्ठों के जीवन की ओर देखते हैं। हम किस तरह जीवन बिताते हैं यह, हम क्या बोलते हैं उससे अधिक महत्वपूर्ण है। प्रति रविवार जो वक्तृत्वपूर्ण मिशनरी संदेश हम देते हैं उसके द्वारा हमारा जीवन किस मूल्यों पर आधारित है यह प्रगट नहीं होता, परन्तु सोमवार से शुक्रवार तक हम जिस लक्ष्य को पूरा करने का प्रयास करते हैं उसके द्वारा दिखायी देता है।

हमारे "तम्बुओं" के निर्धारित मूल्यों से युवावर्ग हमारे यात्रा का सच्चाई का अंदाज लगाते हैं। परमेश्वर की सेवा के लिये आवश्यक धन इकट्ठा करने हेतु जो भावनात्मक अभिभाषण हम देते हैं उनसे वे प्रभावित नहीं होते, क्योंकि वे जानते हैं कि कलम की एक लकीर से

वे इस जरुरत को पूरा कर सकते हैं।

यदि हम सम्पत्ति इकट्ठा करने में अपना जीवन बिता देंगे तो इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि ये युवा लोग भी हमारे कदमों पर चलें। हमें प्रभु यीशु की चेतावनी भूलना नहीं चाहिये, "जो इन छोटों में से किसी एक को ठोकर खिलाता है, उसके लिये यह भला होता, कि चक्की का पाट उसके गले में लटकाया जाता और वह समुद्र में डाल दिया जाता" (लूका 17:2)।

(6) धन संग्रहित करना पाप है क्योंकि उसके द्वारा हम परमेश्वर को लूटते हैं (मलाकी 3:8)। जो कुछ हमारे पास है वह सब उसका है। यदि हम प्रत्यक्ष रुप से उसे परमेश्वर की सेवा के लिये प्रयोग में नहीं ला सकते तो कम से कम जो इस कार्य में लगे हैं उन्हें तो दे सकते है। रुमाल में इस धन को बाँधे रखना अक्षम्य पाप है (लूका 19:20–26)।

(7) जो लोग आर्थिक भण्डारीपन के विषय में परमेश्वर की आज्ञा का पालन नहीं करते, परमेश्वर के वचन के द्वार उनके लिये बन्द हो जाते हैं (मत्ती 6:22,23)। परमेश्वर के सरल वचनों को समझ पाने में वे असमर्थ हो जाते हैं।

मनुष्य के पतीत स्वभाव का यह विचित्र विपर्यास है परन्तु यह सच है। "जितना अधिक यह अध्ययन हमें हमारे उत्पन्नकर्ता के प्रति हमारे व्यक्तिगत जिम्मेदारी के निकट ले जाता है उतना ही अधिक हमारा पापमय स्वभाव हमारे आंखो पर पर्दा डालता है ताकि सत्य को हम जान न सकें, हम सत्य पर विश्वास करना नहीं चाहते और किसी अन्य कल्पना से लिपटे रहते हैं जो इस जिम्मेदारी से हमें मुक्त करती है।"

इस विषय में हेरिंग्टन सी. लीस ने कभी लिखा है :

> हर शिष्ट व्यक्ति का सर्वाधिक संवेदनशील भाग उसकी जेब है, और जब कोई प्रचारक अपने सुननेवालों की जेबों के

विषय में प्रचार करता है तब उसे सबसे संघर्षपूर्ण लड़ाई लड़नी पड़ती है।

खुद का इन्कार करने के विषय में लिखे गए अनुच्छेद हमें तब अप्रासंगिक प्रतीत होते हैं जब हम सिय्योन में बड़े आराम से जीवन बिताते हैं। और जिन आज्ञाओं का हमने स्वयम् अपने जीवन में पालन नहीं किया है उन वचनों को हम निश्चय ही प्रभावी रुप से प्रचार नहीं कर सकते।

आज्ञा न मानने का एक श्राप यह है कि हम बाइबल के वचनों को सही ढंग से समझ नहीं पाते (मत्ती 13:14,15)।

(8) धन इकट्ठा करने के द्वारा व्यावहारिक रुप से हम विश्वास का जीवन व्यतीत नहीं कर पाते। क्यों? क्योंकि धन के होते हुए उसमें विश्वास न कर पाना असम्भव है। जिस व्यक्ति के पास धन है वह यह नहीं जानता कि वह उस पर कितना अधिक निर्भर है।

> धनी का धन उसकी दृष्टि में गढ़वाला नगर और ऊँचे पर बनी हुई शहरपनाह है (नीतिवचन 18:11)।

अपनी समस्त समस्याओं को सुलझानें के लिये, वर्तमान समय के चैन और आराम को पाने के लिये, भविष्य की सुरक्षा के लिये वह धन पर निर्भर रहता है। यदि अचानक उसे अपनी सारी सम्पत्ति खोना पड़ा तो उसके सारे सहारे टूट जाएँगे और वह अपना ढ़ाढ़स खो बैठेगा।

सत्य यह है कि हम जिस परमेश्वर को देख नहीं सकते उससे अधिक भरोसा हम बँक में रखी उस सम्पत्ति पर रखते हैं जो हमें दिखाई देती हैं। परमेश्वर के सिवाय हमारे पास कुछ नहीं है और कोई नही है यह विचार मात्र ही हमारी हिम्मत को तोड़ देता है।

> परमेश्वर के हाथों में रहते हुए हम अपने आप को सुरक्षित महसूस नहीं करते; परन्तु यदि हमारे पास पर्याप्त धन है तो

> हमने हर संकटों से सुरक्षा पा ली हैं ऐसा हम समझते हैं। यह भावना निश्चित ही आम है। परमेश्वर के पितृतुल्य प्रबन्ध के विषय में अविश्वासी होने का खतरा हमें है--सॅम्युएल कॉक्स।

परमेश्वर चाहता है कि हम निरंतर उस पर निर्भर रहे। जब हम इस पृथ्वी पर संपत्ति संग्रहित करते हैं तब हम उसकी इच्छा को हमारे जीवन में पराजित करते हैं।

विश्वास का जीवन ही परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन है। विश्वास के बिना परमेश्वर को प्रसन्न करना अनहोना है (इब्रानियों 11:6)।

विश्वास के जीवन में ही सच्ची सुरक्षा पायी जाती है। "वह विश्वास के द्वारा मिलती है. . . कि प्रतिज्ञा सब वंश के लिये दृढ़ हो. . ." (रोमियों 4:16)।

क्योंकि परमेश्वर के वचन की तुलना में और कोई बातें दृढ़ नहीं है। विश्वास का जीवन चिन्तामुक्त जीवन है। भौतिकवाद से स्नायुसंबंधी एवम् भावनात्मक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, विश्वास के जीवन के द्वारा परमेश्वर के साथ चलने से नहीं।

विश्वास के जीवन के द्वारा ही परमेश्वर को महिमा प्राप्त होती है। जब हम देख कर चलते हैं तब हम मानवीय कल्पनाशक्ति एवम् चतुरता की प्रशंसा करते हैं।

विश्वास का जीवन अविश्वासियों एवम् अन्य मसीही लोगों के समक्ष ऊँचे स्वर से गवाही देता है। वह सभों को गवाही देता है कि स्वर्ग का परमेश्वर हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर देता है।

विश्वास दृष्टि के विरोध में है। जब हम देखते है तब हम विश्वास करते हैं।

धन का संचय विश्वास के जीवन को असंभव बना देता है।

जब व्यक्ति मसीही जीवन को ग्रहण करता है तब विश्वास का जीवन स्वयम् ही उसके पीछे चल कर नहीं आता। उसकी ओर से विचारपूर्ण सक्रियता का होना जरुरी है। यह विशेष कर सम्पन्न समाज में सत्य सिद्ध होता है। विश्वासी को स्वयम् को उस स्थान पर खड़ा रखना है जहाँ वह परमेश्वर पर विश्वास रखने पर मजबूर हैं। उसके पास जो कुछ है उसे बेचकर, गरीबों को दान करने के द्वारा वह यह कर सकता है। वह सचमुच तभी गहरे में जाल डाल सकता है जब वह अपने आप को धन के संचय से और सारे झूठे आधारों से मुक्त करें।

(9) इतना ही नहीं, बल्कि प्रभु यीशु का जहाँ तिरस्कार किया जाता है, जहाँ उसके सेवकों को सताया जाता है, उस संसार में राजा के समान चैन के साथ जीवन व्यतीत करने का अर्थ उसका अनादर करना है। पौलुस कुरिंथियुस के लोगों के विषय में कल्पना करता है कि वे मंच पर महंगे वस्त्रों से सुसज्जित होकर, माथे पर मुकुट धारण किये आलिशान कुर्सियों पर विराजमान होंगे। उसी समय वह उन प्रेरितों का अपनी कल्पना में स्मरण करता हैं कि वे उस अखाड़े में जंगली जानवरों के भक्ष्य होने के लिये तैयार खड़े होंगे।

> तुम तो तृप्त हो चुके। तुम धनी हो चुके, तुमने हमारे बिना राज्य किया; परन्तु भला होता कि तुम राज्य करते कि हम भी तुम्हारे साथ राज्य करते।
>
> मेरी समझ में परमेश्वर ने हम प्रेरितों को सब के बाद उन लोगों की नाई ठहराया है, जिनकी मृत्यु की आज्ञा हो चुकी हो; क्योंकि हम जगत और स्वर्गदूतों और मनुष्यों के लिये एक तमाशा ठहरे हैं। हम मसीह के लिये मूर्ख हैं; परन्तु तुम मसीह में बुद्धिमान हो; हम निर्बल हैं परन्तु तुम बलवान हो; तुम आदर पाते हो परन्तु हम निरादर होते हैं। हम इस घड़ी तक भूखे–प्यासे और नंगे हैं और घूसे खाते हैं और मारे मारे फिरते हैं; और अपने ही हाथों के काम करके परिश्रम करते हैं। लोग बुरा कहते हैं, हम सहते हैं वे बदनाम करते हैं, हम बिनती करते हैं,

हम आज तक जगत के कूडे और सब वस्तुओं की खुरचन की नाई ठहरे हैं (1 कुरिन्थियों 4:8–13)।

प्रभु यीशु मसीह के मुकुट धारण करने से पहले उन्होंने मुकुट पहन लिया था। राज्याभिषेक के अवसर पर बादशाह के मुकुट पहनने से पहले किसी और का मुकुट धारण करना बादशाह के प्रति गंभीर अनादर का प्रतीक माना जाता था।

(10) धन का संग्रह करना प्रभु यीशु के उदाहरण के विपरीत है। वह अमर्याद रुप से धनी था, परन्तु वह स्वेच्छापूर्वक हमारे लिये कंगाल बन गया ताकि उसके कंगाल बन जाने से हम धनी हो जाएँ (2 कुरिन्थियों 8:9)।

नए नियम की मूल भाषा में *'कंगाल'* शब्द के लिये दो शब्द प्रयुक्त हुए है। एक अर्थ है काम करने वाले व्यक्ति की वह अवस्था जिसके पास जीवन की आवश्यकताओं से कुछ भी अधिक नहीं। इसका दूसरा अर्थ है अभावग्रस्त, धन से रहित। प्रभु यीशु का वर्णन करते हुए पौलुस यह दूसरा अर्थ प्रगट करना चाहता है।

हम में से कौन है जो पूर्ण रुप से प्रभु यीशु के पीछे चलना चाहता है?

(11) धन की और एक बुराई है कि वह प्रार्थनामय जीवन के लिये हानिकर है। जब समस्त भौतिक आवश्यकताओं का प्रबन्ध हो जाएँ तो क्यों प्रार्थना करें?

उसी तरह जो कार्य हम कर सकते हैं उसे परमेश्वर से करने कहना यह बहुत गंभीर धोखा है। उदाहरण के तौर पर, हम विश्वासी कई बार परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि किसी विशेष सेवाकार्य के लिये धन का प्रयोजन करें, जबकि वह धन हम स्वयम् अविलंब उस कार्य में लगा सकते हैं। कई बार परमेश्वर का पैसा उसे नहीं मिल पाता है।

(12) मसीही व्यक्ति को धन का संग्रह इसलिये नहीं करना है क्योंकि हो सकता है कुछ लोग धनवान बनने की आशा से मसीही जीवन को अपना लें।

प्रारंभिक विश्वासियों की निष्कांचन दशा उनका ऋण नहीं, बल्कि उनकी परिसम्पत्ति थी।

> जिस धर्म के प्रथम प्रचारकों ने धन का अभाव होते हुए भी समस्त संसार को उलट–पुलट कर दिया, उस धर्म का उगम स्वर्ग ही हो सकता है। यदि अपने श्रोताओं को वितरण करने के लिये प्रेरितों के पास पर्याप्त धन होता, या उन्हें डरा–धमका कर अपने पीछे चलने हेतु मजबूर करने वाली सिपाहियों की फौज उनके पास होती, तो नास्तिक जन सरलता से इस बात का इन्कार करता कि उनकी सफलता के पीछे कोई खास बात थी। परन्तु हमारे प्रभु यीशु के शिष्यों की कंगाल दशा इस विवाद की जड़ ही काट देती है। जिनके पास मनुष्य के स्वाभाविक हृदय को अरुचिकर प्रतीत होने वाला सिद्धान्त हो, जिनके पास दूसरों को रिश्वत देकर अपनी ओर खींचने हेतु, दूसरों को आज्ञा मानने पर मजबूर करने हेतु कुछ नहीं था, उन अल्पसंख्यक गलीलियों ने समस्त विश्व को हिला कर रख दिया और रोमी साम्राज्य का स्वरुप ही बदल दिया। इसका एक ही कारण हो सकता है। जिस सुसमाचार का वे प्रचार कर रहे थे वह परमेश्वर का सत्य था–जे.सी रायल।

मंगोलिया के गिल्मोर ने एक समय लिखाः

> यदि मैं धनी बन कर उनके मध्य में जाऊँ तो वे निरंतर मुझ से माँगते रहेंगे और शायद वे मुझे भेट स्वरुप धन पाने के एक जरीये के अलावा और कुछ न समझें। परन्तु यदि मैं सुसमाचार को छोड़ और कुछ भी उनके पास न ले जाऊँ तो उस अवर्णनीय वरदान से उन्हें कोई भी चीज वंचित नहीं कर सकेगी।

पतरस और यूहन्ना मंदिर के फाटक के पास एक लंगड़े भिखारी से मिले। उसने उन से भीख माँगी और उन्होंने उत्तर में कहा, "चान्दी और सोना तो मेरे पास है नहीं, परन्तु जो कुछ मेरे पास है, वह मैं तुझे देता हूँ, यीशु नासरी के नाम से चल फिर" (प्रेरितो के काम 3:6)।

शायद कुछ लोग यह कहेंगे कि प्रचारकों ने दरिद्री रहना चाहिये, परन्तु जरुरी नहीं कि सभी मसीही ऐसे हो। परन्तु बाइबल में किस स्थान पर विभिन्न मसीही लोगों के लिये विभिन्न आर्थिक स्तर निश्चित किया गया है–प्रचारकों के लिये, और मिशनरियों के लिये और घर में रहते हैं उन लोगों के लिये?

अपसंचित परिसंपत्ति

सो मसीही लोग धन का संचय क्यों न करें इसके लिये उपर्युक्त कारण पर्याप्त है। इसके पश्चात हम इस विषय की चर्चा करेंगे कि क्या अपने तथा अपने परिवार के भविष्य के लिये धनसम्पत्ति संग्रहित करना उचित है।

(1) प्रथम तर्क यह है कि क्या अपने बुढ़ापे के लिये धन संग्रहित कर रखना योग्य है? जब हम काम कर पाने में असमर्थ हो जाएँगे तब क्या होगा? हमें वर्षाकाल के विषय में सोचना हैं। परमेश्वर चाहता है कि हम अपनी बुद्धी का उपयोग करें।

यह विवाद सयुक्तिक जान पड़ता है, परन्तु यह विश्वास की भाषा नहीं है। परमेश्वर पर विश्वास करने के बदले में यह पूँजी हमारा आधार बन जाती है। जब हम देखते हैं तब हम विश्वास नहीं कर सकते (जब हम देखते हैं कि हमारे पास पर्याप्त जमा पूँजी है, तब हम परमेश्वर के प्रबन्ध पर विश्वास नहीं कर पाते)।

भविष्य के प्रबन्ध के विषय में जब हम निर्णय लेते हैं तब हमें इन समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। कितना धन पर्याप्त होगा? हम कितने वर्ष जीवित रहेंगे? क्या अवनमन की मुद्रास्फीति की समस्या उभर आएगी? क्या औषधियों पर अधिक व्यय होगा?

कितना धन पर्याप्त होगा यह जानने का कोई रास्ता नहीं है। इसलिये अवकाशकाल के कुछ गिने चुने वर्ष बिताने हेतु धन–संचय करने में हम अपनी सारी उम्र लगा देते हैं। इस तरह हम परमेश्वर को लूटते हैं और जहाँ सुरक्षा मिल पाना सम्भव नहीं है ऐसे स्थान में सुरक्षा की खोज करने में अपना जीवन गँवा बैठते हैं।

इस से बेहतर क्या यह न होगा कि हम अपनी वर्तमान आवश्यकताओं के लिये पूर्ण लगन से कार्य करें और यथासामर्थ अपने परमेश्वर की सेवा करें तथा वर्तमान आवश्यकता की पूर्ति से अधिक जो कुछ हम बचा पाते हैं वह सब परमेश्वर के कार्य में लगा दें और भविष्य के लिये उस पर निर्भर रहें। जो उसे प्रथम स्थान देते हैं उनके लिये उसका वचन है।

". . .ये सब वस्तुएँ भी तुम्हे मिल जाएँगी" (मत्ती 6:33)।

फिलिप्पी की कलीसिया सत्य के प्रचार के लिये परमेश्वर का धन उपयोग में ला रही थी, पौलुस उन्हें कहता है :

> "मेरा परमेश्वर भी अपने उस धन के अनुसार जो महिमा सहित मसीह यीशु में है तुम्हारी हर एक घटी को पूरा करेगा" (फिलिप्पियों 4:19)।

वर्तमान समय में जिस सिद्धान्त का प्रचलन चल रहा है वह यह है कि हमें अपना जीवन धन की प्राप्ति के लिये व्यतीत करना हैं ताकि हम अवकाश के समय में परमेश्वर की सेवा कर सकें। यह विचार अत्यन्त त्रासदीपूर्ण है। इसका अर्थ उम्र के बेहतरीन वर्ष कार्पोरेशन की सेवा में लगाकर जीवन का निकृष्ट अवशेष यीशु को प्रदान करना है। और यहाँ बचा हुआ समय भी अनिश्चित है। कई बार बाइबल की धूल झाड़ते–झाड़ते ही यह काल खत्म हो जाता है।

वर्षाकाल का प्रबन्ध करना विवेकपूर्ण प्रतीत होता है। परन्तु केमरॉन थॉम्सन सच्चाई की चर्चा करते हैं : "जो लोग इस बात के प्रति

सावधान रहते हैं कि कुछ भी उनके हाथों में चिपकने न पाएँ, उन लोगों पर परमेश्वर अपने उत्तम आशिषों की वर्षा करता है। संसार की वर्तमान दुर्दशा से अधिक मूल्य जो लोग भविष्य के वर्षाकाल को देते हैं, उन्हें परमेश्वर की कोई आशिष नहीं मिलेगी।"

(2) पृथ्वी पर धन संचय करने के विषय का समर्थन करने वाला दूसरा तर्क 1 तीमुथियुस 5:8 पर आधारित है, "पर यदि कोई अपनों की और निज करके अपने घराने की चिन्ता न करें, तो वह विश्वास से मुकर गया है, और अविश्वासी से भी बुरा है।"

इस अध्याय में पौलुस कलीसिया के विधवाओं की देखभाल के विषय में चर्चा करता है। वह कहता है कि विधवा का उत्तरदायित्व उसके मसीही सगे संबंधियों पर है। यदि उसके सम्बंधी न हो तो कलीसिया यह भार उठायें।

परन्तु पौलुस यह नहीं कहता कि उस विधवा का निर्वाह करने हेतु भविष्य के लिये धन का संचय किया जाए। वह उसकी वर्तमान आवश्यकता का उल्लेख करता है। मसीही व्यक्ति को प्रतिदिन अपने बेसहारा संबंधियों के जरुरतों की पूर्ति करना है, यदि नहीं तो हम उस मसीही विश्वास का प्रत्यक्ष रुप में इन्कार करते हैं जो हमें प्रेम व उदारता की शिक्षा देता है। अविश्वासी जन भी अपने लोगों की देखभाल करते हैं। जो विश्वासी **यह** नहीं करता, वह अविश्वासी से भी बुरा है।

यह वचन जमा पूँजी, अर्पित धन अथवा धनसंयोजन के विषय में नहीं कहता। यहाँ वर्तमान आवश्यकताओं की, न कि भविष्य के कर्तव्यों की चर्चा की गयी है।

(3) तीसरा विवाद दूसरे तर्क से संलग्न है। कई मसीही माता–पिता सोचते हैं कि उन्हें अपने बच्चों के लिये विरासत में काफी धनदौलत छोड़ना जरुरी है। वे सोचते हैं कि 'अपनों की चिन्ता करने का'

यही अर्थ है (1 तिमुथियूस 5:8)। बच्चे विश्वासी हो या न हो उनके लिये उचित निर्वाह का प्रबन्ध करने की गंभीर इच्छा हम रखते हैं।

2 कुरिन्थियों 12:14 यह वचन कई बार इस अर्थ से सिखाया जाता है कि हमें अपने बच्चों के लिये धन का संचय करना हैं। यहाँ लिखा है :

> . . .लडके–बालों को माता–पिता के लिए धन बटोरना न चाहिए, पर माता–पिता को लड़के–बालों के लिए।

यह वचन पौलुस की आर्थिक सहायता के संदर्भ में उपयोग किया गया है। उसने कुरिन्थियों से धन नहीं लिया था, परन्तु जब वह कुरिन्थियों में प्रचार कर रहा था तब अन्य मण्ड़लियों ने उसकी सहायता की थी (2 कुरिरिन्थयों 11:7,8)। वह दुबारा कुरिंथ को लौट जाता और वह उन्हें आश्वासन देता है कि वह उन पर बोझ नहीं डालेगा (12:14), वह आर्थिक सहायता के लिये उन पर निर्भर न रहेगा। वह उनके सांसारिक धन में दिलचस्पी नहीं रखता है, परन्तु उनके आत्मिक हित में उसकी रुचि है।

इसी संदर्भ में वह कहता है, ". . .लड़के–बालों को माता–पिता के लिये धन बटोरना न चाहिये, पर माता–पिता को लड़के–बालों के लिये।"

कुरिन्थियुस के लोग बालक थे और पौलुस उनका पिता था (1 कुरिन्थियों 4:15)। वह उपरोध से उन्हें कहता है– कि वे उसे आर्थिक सहायता न दें। उसने यह व्यंग से कहा, क्योंकि यह आवश्यक था कि वे उसकी सहायता करते (1 कुंरिन्थियों 9:11,14)। परन्तु उनके संदर्भ में उसने यह अधिकार त्याग दिया था।

महत्वपूर्ण बात यह है कि इस अनुच्छेद में भविष्य के लिये धन बटोरन के विषय में कुछ नहीं कहा गया। यह चर्चा का विषय नहीं था। यह वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रश्न था। पौलुस कह रहा था,

"बच्चे प्रायः अपने माता–पिता के लिये धन संग्रहित नहीं करते। माता–पिता बच्चों की आवश्यकताएँ पूरी करते हैं।"

अपने बच्चों के लिये विरासत के रुप में धनसंचय करने के विषय में नए नियम की पुस्तक में कोई विचार प्रस्तुत नहीं किया गया है। सब से महान विरासत जो माता–पिता अपने बच्चों के लिये छोड़ सकते हैं वह है आत्मिक विरासत, परन्तु हमारा सांसारिक धन बटोरना इस विरासत के प्रबन्ध में प्रतिबंधक सिद्ध होता है।

जो आर्थिक विरासत मसीही लोगों ने छोड़ रखी हैं उस से उभरे हुए बुरे परिणामों के विषय में सोचें।

अ. अचानक धन का लाभ हो जाने से कई मसीही जवान आत्मिक दृष्टि से नाश हो गए हैं। भौतिकता और विलास का नशा उन्हें चढ़ गया और वे परमेश्वर की सेवा से दूर हो गए।

ब. जमीन जायदाद और वसीयत के कारण परिवारजनों में संघर्ष उत्पन्न हुए, उनके विषय में सोचिए। बहन बहन की दुश्मन बन गयी और भाई भाई का। और संपूर्ण जीवन भर यह लड़ाईयाँ चलती रही।

विरासत के प्रश्न से उभरे एक पारिवारिक संघर्ष का वर्णन लूका 12 :13,14 में किया गया है। प्रभु यीशु ने इस विवाद में पड़ने से इन्कार किया, वह इस तरह के कार्य के लिये इस संसार में नहीं आया था। परंतु उस दुःखी पुरूष को, जिसका नाम वसीयत में नहीं था, उसे उसने लोभ के विषय में चेतावनी दी।

क. माता–पिता अपने बच्चों के नाम कुछ रख छोड़ने हेतु सारा जीवन परिश्रम करते हैं। वृद्ध और निर्बल होने के पश्चात वे अपने बच्चों पर आश्रित हो जाते हैं। परंतु अनुपकारी बच्चें उस धन को हथियाने के लिये अपने माता–पिता की मृत्यु तक इन्तजार नहीं कर सकते।

ड. अविश्वासी बच्चों के नाम छोड़ा गया धन या अविश्वासियों के साथ ब्याहे पुत्र या पुत्री के नाम छोड़ी गयी सम्पत्ती गलत स्थान पर या गलत कलीसिया में जा पहुँचती है, और सुसमाचार कार्य को बढ़ावा देने के बजाय इस धन का विनियोग सुसमाचार सेवा का दमन करने हेतु किया जाता है। सोचिये! विश्वासियों की सम्पत्ति सत्य के विरोध में उपयोग की जाती है।

इ. इसके अलावा जो धन विरासत पर लगने वाले कर के रूप बड़े पैमाने पर सरकार को और वकीलों की फीस के बदले में देना पड़ता है उसका क्या? यही सारी सम्पत्ति आत्माओं के उद्धार के लिये उपयुक्त सिद्ध होती।

फ. कुछ लोग इस यातना से और झमेलों से बचने हेतु अपना पैसा मसीही संस्थाओं को दान स्वरूप दे देते हैं। परंतु यह धन उन संस्थाओं को मिलेगा ही इसका कोई भरोसा नहीं होता। वसीयत के लिये कई लड़ाईयाँ लड़ी जाती हैं। इन सब बातों के अलावा, वसीयत छोड़ने की परंपरा का कोई आधार नहीं है। न ही हम इस बात का निश्चय दिला सकते हैं कि इस धन के हाथ लगते वे परमेश्वर के प्रति और उसके वचन के प्रति प्रामाणिक बने रहें।

अपनी वसीयत में धन छोड़ने के कारण विश्वासी को प्रतिफल नहीं दिया जाएगा। जिस क्षण उनकी मृत्यु होगी उस क्षण वह धन उनके हाथों से छुट जाएगा, वह मात्र उनकी सांसारिक संपत्ति का हिस्सा बन कर रह जाएगा।

मनुष्य धन का संचय तो करता है, परंतु नहीं जानता कि उसे कौन लेगा (भजन संहिता 39 : 6)। यदि आप चाहते हैं कि आपकी संपत्ति परमेश्वर के कार्य के लिये उपयोग में लायी जाए, तो उसे आपके जीते जी ही परमेश्वर को सौंप दें। यही भविष्य में प्रतिफल पाने का एक मात्र मार्ग है।

हम कहते हैं कि प्रभु यीशु मसीह का आगमन निकट है। सो हमें

इस बात को भी समझ लेना हैं कि जैसे जैसे हम उसके आगमन के निकट पहुँचते हैं, उतना ही कम मूल्य हम अपनी सांसारिक दौलत को देने लगें। जब वह आएगा तब न तो इस धन का ही कुछ मूल्य होगा, न ही उसके लिये कोई कार्य करना बाकी रह जाएगा। सो आज ही हम अपनी संपत्ति को प्रभु यीशु के कार्य में लगा दें।

(4) फिर यह प्रश्न उभर आता है: "यदि सभी लोग अपनी उपजीविका के पश्चात अपना सारा धन प्रभु की सेवा में जुटा दें, तो हम कैसे जीयेंगे?"

हम कैसे जीयेंगे? "विश्वास से अधिक और देख कर कम।"

यह सहायक सिद्ध न होगा इस विषय में कोई विवाद नहीं, क्योंकि प्रारंभिक कलीसिया के लिये यह सत्य प्रमाणित हुआ।

> "और वे सब विश्वास करने वाले इकट्ठे रहते थे, और उनकी सब वस्तुएँ साझे की थी। और वे अपनी अपनी संपत्ति बेच बेचकर जैसी जिस जिस की आवश्यकता होती थी बाँट दिया करते थे" (प्रेरितों के काम 2 : 44–45)।
>
> और उनमें कोई भी दरिद्र न था; क्योंकि जिनके पास भूमि या घर थे, वे उनको बेच बेचकर, बिकी हुई वस्तुओं का दाम लाते, और उसे प्रेरितों के पांवों पर रखते थे। और जैसी जिसे आवश्यकता होती थी, उनके अनुसार हरेक को बाँट दिया करते थे (प्रेरितों के काम 4 : 34,35)।

कुरिन्थियुस की कलीसिया को लिखते हुए पौलुस यह शिक्षा देता है कि हम अपनी भौतिक संपत्ति को बहाते रखें, संचित करके न रखें। जब कभी हमें जरूरत महसूस होती है, हम उस धन को आवश्यकता की पूर्ति के लिये दे दें। उसी तरह जब हमें आवश्यकता होगी तब हमारी जरूरत भी इसी तरह पूरी होगी। इस तरह परमेश्वर के लोगों में निरंतर धन के मामले में समानता बनी रहें।

> यह नहीं कि, औरों को चैन और तुमको क्लेश मिले। परंतु बराबरी के विचार से इस समय तुम्हारी बढ़ती उनकी घटी में काम आए,ताकि उनकी बढ़ती भी तुम्हारी घटी में काम आए, कि बराबरी हो जाए। जैसा लिखा है, कि जिसने बहुत बटोरा उसका कुछ अधिक न निकला, और जिसने थोड़ा बटोरा उसका कुछ कम न निकला (2 कुरिन्थियों 8 : 13–15)।

दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि यदि कोई व्यक्ति समर्पित जीवन व्यतीत करता है और अपनी सम्पत्ति के अच्छे भण्ड़ारी के नाते जीवन व्यतीत करता है तो अन्य मसीही विश्वासियों ने स्वेच्छा और आनंदपूर्वक उसकी जरूरत के समय उसकी सहायता करने हेतु सिद्ध होना चाहिए।

यदि हम अपने आप से वफादार रहेंगे तो दूसरों पर निर्भर रहने का विचार हमें अच्छा प्रतीत नहीं होगा, यह हमें कबूल करना होगा। हम अपनी स्वतंत्रता पर घमण्ड़ महसूस करते हैं। परंतु क्या यह हमारी स्वार्थ नीति का प्रकटन नहीं है? प्रभु यीशु का जीवन हमारे द्वारा प्रगट नहीं हो रहा है।

1 तीमुथियुस 5 : 3–13 में पौलुस विधवाओं की देखभाल के विषय मे कलीसिया को शिक्षा देता है। यह ऐसी कलीसिया की ओर निर्देश करता है जहाँ परमेश्वर का प्रेम मनुष्यों के मन में उंड़ेला गया है, जहाँ पवित्र जन एकदूसरे की देखभाल करते हैं, और जहाँ पैसों की आवश्यकता होती है वहाँ उनका धन मुक्त रुप से दान कर दिया जाता है।

और यदि हम इस विषय पर यह कह कर प्रतिवाद करें कि यह प्रारंभिक कलीसिया में साध्य था, वर्तमान समय में नहीं, तो हमारा उत्तर है कि यह आज भी उतना ही सच है। कई मसीही लोग आज भी विश्वास का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। और हम इस बात को इन्कार नहीं कर सकते कि उनके जीवन में एक *सामर्थ्य* है, *आकर्षण* है।

(5) कुछ लोग यह कह कर इस बात को अस्वीकार करेंगे कि,

"क्या पौलुस ने यह नहीं कहा, 'मैं दीन होना भी जानता हूँ, और बढ़ना भी जानता हूँ' " (फिलिप्पियों 4:12)? प्रश्नकर्ता के मन में स्पष्ट रुप से उस दीन पौलुस का चित्र है जो भूखा, प्यासा, थका हुआ, फटे कपड़े और फटे जूते पहना हुआ रेगिस्तान में पैदल यात्रा करता है। परंतु वही संपन्न पौलुस को वह पाम स्प्रिंग की आधुनिक फैशन के वस्त्र पहनकर किसी समुद्र किनारे पर आलिशान रथ में विराजमान होकर, अमरिकी योजना के अनुसार ऐशो आराम के दो सप्ताह बिताते हुए देखता है। सारांश में, हम यह कह सकते हैं कि वह विपन्न दशा में भी रह सकता था और संपन्न दशा में भी।

परंतु फिलिप्पियों की पत्री में पौलुस के कथन का शब्दशः यह तात्पर्य नहीं हैं। यह पत्र उसने **कैदखाने स** लिखा था और न ही किसी समुद्र किनारे पर बसे क्रीड़ा–स्थान से। उस कैदखाने से लिखते हुए वह कहता है,

> मेरे पास सब कुछ है, बरन् **बहुतायत** से भी है : जो वस्तुयें तुमने इपफ्रुदीतुस के हाथ से भेजी थी उन्हें पाकर मैं तृप्त हो गया हूँ... (फिलिप्पियों 4:18)।

हम यह सोचते हैं कि कैदखाना **दीनता** को दर्शाता है, परंतु पौलुस ने उसे **संपन्न** का दर्जा दिया। इसलिए यह उचित नही है कि हम फिलिप्पियों 4:12 का आधार लेकर संपन्नता और विलास के जीवन का समर्थन करें। वचन यह शिक्षा नहीं देता।

(6) अब इस वचन का अर्थ क्या है जो कहता है कि परमेश्वर ने हमारे सुख के लिए सब कुछ बहुतायत से दिया है? (1 तीमुथियुस 6:17)। इस वचन का प्रमाण देकर कई बार कहा जाता है कि विश्वासियों को "जीवन की उत्तम वस्तुओं का" आनंद उठाना अनुचित नहीं हैं, इसका अर्थ है आधुनिक एवम् उत्तम से उत्तम सभी वस्तुओं का लाभ उठाने की उसे अनुमति दी गई है। परंतु पौलुस का नारा था "परमेश्वर के लोगों के लिये कुछ भी अति उत्तम नहीं है।"

अब इस वचन की ओर गौर कीजिये : "इस संसार के धनवानों को आज्ञा दें कि वे अभिमानी न हो और चंचल धन पर आशा न रखें ..." दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि यह वचन ऐशोआराम की जिंदगी के लिये कोई बहाना प्रस्तुत नहीं करता, परंतु धनवानों को गंभीर शब्दों में चेतावनी देता है।

फिर परमेश्वर ने हमारे सुख के लिए सब कुछ बहुतायत से दिया है इस वचन का क्या अर्थ है? इसका अर्थ यह हैं कि परमेश्वर ने ये वस्तुयें संचित कर रखने के लिये नहीं दी; वह चाहता है कि दूसरों के साथ इसका आदान–प्रदान कर हम **आनंद उठायें**। निम्नलिखित वचनों के द्वारा यह स्पष्ट होता है :

> और भलाई करें, और भले कामों में धनी बनें; और उदार और सहायता देने में तत्पर हो। और आगे के लिये एक अच्छी नेंव डाल रखें, कि सत्य जीवन को वश में कर लें (1 तीमुथियुस 6:18,19)।

धन का आनंद उसका संचय करने में नहीं है, परंतु परमेश्वर की महिमा के लिए और दूसरों की भलाई के लिए उसका व्यय करने में है।

(7) हमें यह बात भी ज्ञात होती है कि इब्राहीम संपन्न व्यक्ति था (उत्पत्ति 13:2), और फिर भी उसे परमेश्वर का मित्र कहा गया। यह सत्य है, परंतु यह स्मरणयोग्य है कि इब्राहीम पुराने नियम के दिनों में जी रहा था जिस समय भौतिक संपत्ति परमेश्वर की आज्ञा के अनुपालन के प्रतिफल के रुप में प्राप्त होती थी। धन परमेश्वर की आशिष का प्रतीक था।

क्या यह अनुग्रह के समय में सत्य है? यह कहना उचित होगा कि विपन्नावस्था इस समय की आशिष है।

लाजरस और धनी व्यक्ति के दृष्टांत में (लूका 16:19–31), पुराने

नियम के परिमाण विपरीत कर दिये गये हैं। धनवान व्यक्ति को इस कारण दोषी ठहराया गया क्योंकि उसने अपने धन का उपयोग दूसरों के लिये न करते हुए उसे अपने स्वार्थ के लिये संचित कर रखा था।

(8) क्या हमें चीटियों का उदाहरण नहीं दिया गया?

> हे आलसी, चीटियों के पास जा; उनके काम पर ध्यान दें, और बुद्धिमान हो। उनके न तो कोई न्यायी होता, न प्रधान, न प्रभुता करने वाला, तो भी वे अपना आहार धूपकाल में संचय करती है, और कटनी के समय अपनी भोजन वस्तु बटोरती है (नीतिवचन 6: 6–8)।

क्या यह नहीं कहा गया है कि चींटी अपने भविष्यकाल के लिये उचित प्रबंध करती है, और इस विषय में उसका अनुकरण करने के लिये क्या हमें कहा नहीं गया है? जी हाँ, परंतु महत्वपूर्ण बात यह है कि चींटी का भविष्य इस संसार में है, परंतु मसीही व्यक्ति का भविष्य स्वर्ग में है। विश्वासी इस पृथ्वी पर यात्री और पराया है; उसका घर स्वर्ग में स्थित है और उसे अपने **भविष्य** के लिये धन संग्रहित करना है।

जहाँ तक उसके वर्तमान जीवन की बात है, उसे कल की चिंता करने की अनुमति नहीं दी गई है– अर्थात, क्या खायेंगे और क्या पीयेंगे (मत्ती 6:25)। उसे पक्षियों का अनुकरण करने कहा गया है जो न तो बोते हैं, न काटते हैं, और न खत्तों में बटोरते हैं; तौभी स्वर्गीय पिता उन्हें खिलाता है। सो यदि परमेश्वर गौरया की चिंता करता है तो वह क्योंकर हमारी चिंता न करेगा !

(9) अंतिम विवाद यह है कि धनवानों को सुसमाचार देने हेतु हमारा धनी होना आवश्यक है। पहली सदी की कलीसिया के मसीही लोगों को यह आवश्यक नहीं जान पड़ा। "इतिहास साक्षी है कि कई प्रारंभिक मसीही जन सुसमाचार को संसार के हर कोने में ले जाने हेतु इतने उत्सुक थे कि उन्होंने स्वयम् को सेवक बनने के लिये बेच दिया

या गुलाम बना लिया, ताकि उन्हें धनसंपन्न लोगों के घरों में और उच्च पद पर स्थित अन्य जाति लोगों के घरों में प्रवेश मिल सके, और वे वहाँ परमेश्वर के प्रेम और उसके उद्धार का संदेश सुनाने का अवसर पा सकें" (जे. आर. मिलर द्वारा लिखित **'कम यी अपार्ट'** नामक पुस्तक से उद्धृत)।

बाइबल क्या कहती है?

अब तक हमने इस मुख्य विषय पर चर्चा की है कि जिस संसार में अपार दरिद्रता का वास है, वहाँ मसीही लोग संपन्न जीवन कैसे व्यतीत करें।

इसके विपरीत यहाँ बाइबल से कुछ वचन दिए गये हैं जो हमें धन के खतरों से सचेत करते हैं।

(1) "सच्चे मनुष्य पर बहुत आशीर्वाद होते रहते हैं, परंतु जो धनी होने में उतावली करता है, वह निर्दोष नहीं ठहरता। लोभी जन धन प्राप्त करने में उतावली करता है, और नहीं जानता कि वह घटी में पड़ेगा" (नीतिवचन 28:20,22)।

जो परमेश्वर के स्वरूप और समानता में सिरजा गया था उसके लिये भौतिक धन के पीछे भागते रहना अशोभनीय है।

(2) "कोई मनुष्य दो स्वामी की सेवा नहीं कर सकता, क्योंकि वह एक से बैर और दूसरे से प्रेम रखेगा, व एक से मिला रहेगा और दूसरे को तुच्छ जानेगा; तुम परमेश्वर और धन दोनों की सेवा नहीं कर सकते" (मत्ती 6:24)।

यहाँ परमेश्वर और धन को दो स्वामियों की उपमा दी गई है,

जिनके हित एक दूसरे से इतने भिन्न हैं कि दोनों की एक साथ सेवा करना असंभव है। दोनों संसार में रहने की इच्छा पर यह एक प्रबल आघात है, यहाँ भी धनी और वहाँ भी संपन्न, यहाँ संसार में धन का आनंद उठायें और वहाँ स्वर्ग में भी प्रतिफल प्राप्त करें यह सर्वथा असंभव है।

(3) "तब यीशु ने अपने चेलों से कहा, मैं तुमसे सच सच कहता हूँ कि धनवान का स्वर्ग के राज्य में करना प्रवेश करना कठिन है। फिर तुमसे कहता हूँ कि स्वर्ग के राज्य में धनवान के प्रवेश करने से उँट का सुई के नाके में से निकल जाना सहज है। यह सुनकर चेलों ने बहुत चकित होकर कहा फिर किस का उद्धार हो सकता है? यीशु ने उनकी ओर देखकर कहा, मनुष्यों से तो यह नहीं हो सकता, परंतु परमेश्वर से सब कुछ हो सकता है " (मत्ती 19:23–26)।

हम प्रभु यीशु के इन वचनों को गंभीरतापूर्वक ग्रहण करते हैं इस विषय में मुझे संदेह है। उसने यह नहीं कहा कि धनवान मनुष्य के लिये स्वर्ग में प्रवेश पाना कठिन है; उसने कहा मनुष्य के लिये यह असंभव है।

कुछ लोग सुई के नाके का अर्थ शहर के फाटक में स्थित छोटा सा द्वार है। उँटों को इस द्वार से प्रवेश करने हेतु झुकना पड़ता था। परंतु सुई का अर्थ यहाँ सिलाई की छोटी सी चीज है जिसमें से उँट कतई प्रवेश नहीं कर सकता।

धनवान व्यक्ति का स्वर्ग में प्रवेश पाना ईश्वरीय सामर्थ के किसी विशेष चमत्कार से ही सिद्ध हो सकता है। तो फिर क्यों हम मनुष्य के सार्वकालिक कल्याण के मार्ग में खड़े इस प्रतिबंध को बचाने का प्रयास करते हैं?

(4) "परंतु हाय तुम पर, जो धनवान हो, क्योंकि तुम अपनी शांति पा चुके" (लूका 6:24)।

यहाँ परमेश्वर के पवित्र पुत्र ने धनवानों को धिक्कारा है। इस वचन को हम शब्दशः ग्रहण कर सकते हैं। परमेश्वर ने जिसे आशीषित

नहीं किया उन्हें हम आशिष देने की क्यों कोशिश करते हैं?

(5) "अपनी संपत्ति बेचकर दान कर दो; और अपने लिये ऐसे बटुए बनाओ, जो पुराने नहीं होते, अर्थात् स्वर्ग पर ऐसा धन इकट्ठा करो जो घटता नहीं और जिसके निकट चोर नहीं जाता, और कीड़ा नहीं बिगाड़ता। क्योंकि जहाँ तुम्हारा धन है, वहाँ तुम्हारा मन भी लगा रहे" (लूका 12:33,34)।

यह वचन शिष्यों से कहे गये थे (वचन 22)। यह वचन हमारे लिये नहीं है ऐसा कह कर हम बात टालने की कोशिश करते हैं। क्यों नहीं? इन वचनों का विरोध करते हुए हम उन आशिषों को रोक रहे हैं।

यह कितना आवश्यक है कि हम अनुग्रह के इस युग में, अपना अनमोल धन बेचकर–अपने हीरे जवाहरात, अपने महँगे पोस्टर्स, हमारे प्राचीन फर्निचर, हमारे चाँदी के अमूल्य बर्तन, हमारे स्टॅम्प कलेक्शन–अपना सर्वस्व इस संसार की आत्माओं के उद्धार के लिये दान कर दें।

हमारा मन कहाँ है? क्या वह स्थानीय बैंक के किसी लॉकर में खोया हुआ है? या वह स्वर्ग में लगा हुआ है?

"जहाँ तुम्हारा धन है, वहाँ तुम्हारा मन भी लगा रहे।"

(6) "यह सुन यीशु ने उससे कहा, तुझ में अब भी एक बात की घटी है, अपना सब कुछ बेचकर कंगालों को बांट दें; और तुझे स्वर्ग में धन मिलेगा, और आकर मेरे पीछे हो लें। वह यह सुनकर बहुत उदास हुआ क्योंकि वह बड़ा धनी था" (लूका 18:22,23)।

हमें यह निरंतर बताया जाता है कि वह धनवान व्यक्ति एक विशेष उदाहरण था। यह आज्ञा हर किसी के लिए नहीं दी गई थी। परंतु, यदि यह ऐसा है तो, इससे पूर्व जो अनुच्छेद हमने देखा हैं (लूका 12:33,34) उससे भिन्न नहीं हैं।

(7) "पर संतोष सहित भक्ति बड़ी कमाई है। क्योंकि न हम

जगत में कुछ लाये हैं और न कुछ ले जा सकते हैं। और यदि हमारे पास खाने और पहिनने को हो, तो इन्हीं पर संतोष करना चाहिये। पर जो धनी होना चाहते हैं, वे ऐसी परीक्षा एवम् फन्दे और बहुतेरे व्यर्थ और हानिकारक लालसाओं में फसते हैं, जो मनुष्य को बिगाड़ देती और विनाश के समुद्र में डुबा देती है। क्योंकि रूपये का लोभ सब प्रकार की बुराईयों की जड़ है, जिसे प्राप्त करने का प्रयत्न करते हुए कितनों ने विश्वास से भटक कर अपने आप को नाना प्रकार के दुःखों से छलनी बना लिया है। पर हे परमेश्वर के जन, तू इन बातों से भाग; और धर्म, भक्ति, विश्वास, प्रेम, धीरज और नम्रता का पीछा कर" (1 तीमुथियुस 6:6–11)।

पौलुस चेतावनी देता है कि जो धन का लोभ रखते हैं वे अनेक दुःखों को न्योता देते हैं। वह किन दुःखों के विषय में कहता है?

(अ) पहिली तो चिंता है जो दुःख के साथ आती है। "धनी के धन के बढ़ने के कारण उसको नींद नहीं आती" (सभोपदेशक 5:12)। माना जाता है कि धन से सुरक्षा प्राप्त होती है परंतु इसके विपरीत धन कई प्रकार के भय को जन्म देता है–चोरी का निरंतर भय, शेयर बाजार के उतार चढाव, मुद्रास्फीति आदि का भय।

(ब) दूसरा दुःख यह है कि कई बार धन से प्राप्त सुख सुविधाओं की बहुतायत से बच्चों का जीवन आत्मिक दृष्टि से नाश हो जाता है। बहुत कम मसीही धनवान लोगों के बच्चे परमेश्वर की सेवा में रत है।

(क) कई बार जब हमें धन की अत्यधिक आवश्यकता होती हैं ऐसे समय हम उसे नहीं पाते।

(ड) धनवान व्यक्ति यह नहीं जानता कि उसके वास्तव में कितने मित्र हैं। यह नीतिवचन 14:20 के विपरीत जान पड़ता है, जिसमें लिखा है, "निर्धन का पड़ोसी भी उससे घृणा करता है, परंतु धनी के बहुतेरे मित्र होते हैं।" परंतु वास्तव में वे सच्चे

मित्र है–या अपनी स्वार्थपरता के लिये यह मित्रता निभा रहें हैं?

(इ) धन मनुष्य के हृदय की लालसा को कभी संतुष्ट नहीं कर सकता (सभोपदेशक 2:8,11), परंतु वह और अधिक पाने की लालसा उत्पन्न करता है (सभोपदेशक 4:8,5:10)।

(फ) अन्त में, हम यह कह सकते हैं कि संपत्ति का मनुष्य के चरित्र पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, वह घमण्ड को जन्म देता है (नीतिवचन 28:11), दुराचरण (नीतिवचन 18:23; याकूब की पत्री 2:5–7) को जन्म देता है।

मॅथ्यु हेन्री कहते हैं, "धन शब्द के लिये इब्रानी भाषा में जो शब्द प्रयुक्त किया गया है वह 'भारीपन' को दर्शाता है। संपत्ति वास्तव में एक बोझ है–उसे पाने की चिंता का बोझ, उसे कैसे संभाले इस भय का बोझ, मोह और परीक्षा, दुःख का बोझ और अन्त में, हमें उसका हिसाब देना होगा, इस विचार का बोझ।"

(8) "इस संसार के धनवानों को आज्ञा दे कि वे अभिमानी न हो और चंचल धन पर आशा न रखें, परंतु परमेश्वर पर जो हमारे सुख के लिये सब कुछ बहुतायत से देता है। और भलाई करें और भले कामों में धनी बनें; और उदार और सहायता देने में तत्पर हो। और आगे के लिये अच्छी नेव ड़ाल रखें कि सत्य जीवन को वश में कर लें" (1 तीमुथियुस 6: 17–19)।

इन वचनों में हमें "धनवानों को आज्ञा देने" के विषय में कहा गया है। परंतु परमेश्वर के कितने सेवक इस आज्ञा का पालन करते हैं? हम में से कितनों ने धनवानों को आज्ञा दी है? हम में से कई लोगों ने अब तक इस विषय में सन्देश तक नहीं सुना है। और संभव है इस क्रान्तिकारी संदेश की वर्तमान समय में ज्यादा आवश्यकता है।

इस संदेश का प्रचार करने हेतु, हमें अपने आप के प्रति इमानदार बनने की जरूरत है। यदि हम विश्वास के बजाय, देख कर जीवन बिताते हैं, तो हम अन्य लोगों को कैसे बता सकते हैं कि हम

इस पृथ्वी पर धन संचय न करें? हमारा जीवन हमारे मुँह पर मुहर लगा देता है।

परमेश्वर ऐसे भविष्यवक्ताओं की खोज में है जो परिणामों को न देखते हुए, निर्भयता के साथ परमेश्वर का वचन सुना सकते हैं। आमोस पुकार उठा:

> हे बाशान की गायों, यह वचन सुनो, तुम जो सामरिया पर्वत पर हो, जो कंगालों पर अन्धेर करती, और दरिद्रों को कुचल ड़ालती हो, और अपने अपने पतियों से कहती हो कि ला दे, हम पीएं! परमेश्वर यहोवा अपनी पवित्रता की शपथ खाकर कहता है, देखो, तुम पर ऐसे दिन आने वाले हैं, कि तुम कटिया से और तुम्हारी संतान मछली की बन्सियों से खींच लिये जायेंगे। और तुम बाड़े के नाकों से होकर सीधी निकल जाओगी, यहोवा की यही वाणी है (आमोस 4:1–3)।

हाग्गै गरज उठा:

> क्या तुम्हारे लिये अपने छत वाले घरों में रहने का समय है, जब की यह भवन उजाड़ पड़ा है? (हाग्गै 1:4)

भविष्यवक्ता कभी लोकप्रिय न हो सकें। अपने समकालिनों के लिये वे लज्जा का कारण थे। उनके पास धन का अभाव था और समाज से वे बहिष्कृत थे। उन्हें सताया जाता था, और उन्हें खामोश न किया जा सका तो उन्हें मार ड़ाला जाता था। परंतु उन्हें इस बात की परवाह न थी, और झूठ के साथ जीने के बजाय उन्हें मर जाना अधिक उचित जान पड़ता था।

भौतिकतावाद और धन के मोह के द्वारा आज हमारी मण्डलियों में आत्मिक सामर्थ्य का प्रवाह प्रतिबंधित हो गया है। जब तक विश्वासी लोग राजा बन कर राज करते रहेंगे, तब तक बेदारी नहीं आएगी। कौन परमेश्वर के लोगों को विश्वास और समर्पण के जीवन की ओर फेरेगा?

कौन है जो लोगों को सच्चे जीवन का मार्ग दिखाएगा (1 तीमुथियुस 6:19)? अनंतकाल के प्रकाश में जीवन बिताना ही वास्तविक जीवन है—जो कुछ हमारे पास है उसे परमेश्वर की महिमा के लिये उपयोग में लाना, अपनी आँखों को स्वर्गीय भवन की ओर लगाना। यही वास्तविक जीवन है"—सी. एच. मॅकिन्टॉश।

(9) "और धनवान अपनी नीच दशा पर (आनंद करें): क्योंकि वह घास के फूल की नाई जाता रहेगा। क्योंकि सूर्य उदय होते ही कड़ी धूप पड़ती है और घास को सुखा देती है, और उसका फूल झड़ जाता है, और उसकी शोभा जाती रहती है; उसी प्रकार धनवान भी अपने मार्ग पर चलते चलते धूल में मिल जाएगा" (याकूब की पत्री 1: 10, 11)।

धनवान व्यक्ति से यह नहीं कहा गया कि वह अपनी संपत्ति के विषय में आनंदित हो, क्योंकि धन तो घास के समान नाशमान है, परंतु आत्मिक अनुभव और आत्मिक शिक्षाएँ सार्वकालिक मूल्य रखती है।

(10) "हे धनवानों, तुम सुन लो; तुम अपने आने वाले क्लेशों पर चिल्लाकर रोओ। तुम्हारा धन बिगड़ गया और तुम्हारे वस्त्रों को कीड़े खा गये। तुम्हारे सोने और चान्दी पर काई लग गयी है और वह काई तुम पर गवाही देगी, और आग की नाई तुम्हारा माँस खा जाएगी; तुम ने अंतिम युग में धन बटोरा है। देखो, जिन मज़दूरों ने तुम्हारे खेत काटे, उनकी वह मज़दूरी जो तुम ने धोखा देकर रख ली है, चिल्ला रही है और लवने वालों की दोहाई, सेनाओं के प्रभु के कानों तक पहुँच गयी है। तुम पृथ्वी पर भोग विलास में लगे रहे और बड़ा ही सुख भोगा; तुम ने इस वध के दिन के लिये अपने हृदय का पालन पोषण करके मोटा ताजा किया। तुमने धर्मी को दोषी ठहरा कर मार ड़ाला; वह तुम्हारा सामना नहीं करता" (याकूब की पत्री 5:1–6)।

परमेश्वर का आत्मा धन का संचय करने के विरोध में आक्रोश करता है (3 रा वचन), मज़दूरों की मज़दूरी न देकर धन बटोरने के विरोध में (4 था वचन), विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करने के विरोध

में (5 वा वचन), दीन लोगों की असहायता का लाभ उठाने के विरोध में परमेश्वर का वचन चेतावनी देता है।

यह वचन विश्वासियों के लिये लिखे गए हैं या अविश्वासियों के लिये हैं इस विषय में कोई विवाद नहीं। यदि ये वचन हमारे जीवन में लागू होते हैं तो हम उन्हें अपनायें।

(11) "तू जो कहता है कि मैं धनी हूँ, और धनवान हो गया हूँ, और मुझे किसी वस्तु की घटी नहीं है, और यह नहीं जानता कि तू अभागा और तुच्छ और कंगाल और अँधा और नंगा है। इसीलिये मैं तुझे सम्मति देता हूँ कि आग में ताया हुआ सोना मुझसे मोल ले कि धनी हो जाए और श्वेत वस्त्र ले ले कि पहनकर तुझे अपने नंगेपन की लज्जा न हो; और अपने आँखों में लगाने के लिये सुर्मा ले, कि तू देखने लगे। मैं जिन जिन से प्रीति रखता हूँ, उन सबको उलाहना और ताड़ना देता हूँ, इसलिये सरगर्म हो और मन फिरा" (प्रकाशित वाक्य 3:17–19)।

यह कलीसिया के लिये परमेश्वर का अंतिम संदेश है, लौदीकिया की कलीसिया को वह इन कठोर शब्दों में चेतावनी देता है। उनकी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं, उनका अर्थ स्पष्ट है। हम जानते हैं कि उन वचनों को हमें अपने जीवन में लागू करना हैं। हमें केवल आज्ञापालन करने की जरूरत हैं।

आलसी व्यक्ति को चेतावनी

यह खतरा निरंतर बना रहता है कि इस तरह के पत्र के बहाने लोग अपनी अकर्मण्यता की सफाई पेश करें। जो व्यक्ति काम करने से जीं चुराता है वह इन पृष्ठों को पढ़कर कहे, "मैंने हमेशा इसी बात पर भरोसा किया है।"

यह संदेश उस अक्षम आलसी के लिये नहीं है जो सोचता है कि उसका पोषण करने की जिम्मेदारी संसार पर (या कलीसिया पर) है। ऐसे लोगों के लिये परमेश्वर के पास एक भिन्न संदेश है, "अपने बिछौने को छोड़ो और जाकर काम करो" (2 रा थिस्सलुनीकियो 3:6–12)।

यह संदेश उन लोगों के लिये हैं जो अपने काम में तत्पर, गंभीर, परिश्रमी तथा उद्यमी है। जो अपने परिवार की वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये तत्पर रहते हैं, जिन्होने अपने जीवन में प्रभु यीशु को प्राथमिकता दी हैं, और वे अपने भविष्य के लिये परमेश्वर पर भरोसा रखते हैं।

दूसरों का न्याय करने के विरोध में चेतावनी

हमें और एक खतरे से बचे रहने का प्रयास करना हैं। वह खतरा है लोगों को उनके भौतिक धन के कारण दोषी ठहराने का। हमें दूसरों का न्याय करने की आवश्यकता नहीं हैं, परमेश्वर के प्रति उनके समर्पण के विषय में हमें संदेह नहीं करना चाहिए।

धन के विषय में परमेश्वर के वचन के सिद्धांतों का प्रकाशन करना एक बात है, और किसी मसीही के घर जाकर उसकी कुल सम्पत्ति की मानसिक तालिका बनाकर उस पर दोष लगाना अलग बात है।

परमेश्वर क्या कहता है उसे सुनने की और उसे अपने जीवन में लागू करने की जिम्मेदारी प्रत्येक व्यक्ति पर है। बड़े परिवार की वर्तमान आवश्यकताएँ एक व्यक्ति की जरूरतों की तुलना में हमेशा अधिक होगी।

हम किसी से यह नहीं कह सकते कि उसके जीवन में परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने का अर्थ क्या है। मसीह के भण्डारी होने

के नाते हमें परमेश्वर को अपनी बातों का हिसाब देना होगा, न कि दूसरों के।

सो हम प्रार्थना करते हैं कि परमेश्वर हमें दूसरों के प्रति कठोर, आलोचनात्मक, छिद्रान्वेषी मनोवृत्ति अपनाने से बचाए रखें।

निष्कर्ष

परमेश्वर के वचन से यह स्पष्ट होता है कि विश्वासियों को वस्त्र, भोजन और निवास में सन्तुष्ट होना चाहिए। उन्हें अपने परिवार की सामान्य जरुरतों के लिये परिश्रम करना है, और आवश्यकता से अधिक जो कुछ वे पाते हैं उसे उन्हें परमेश्वर के कार्य के लिये देना हैं। अपने भविष्य के निर्वाह के लिये उन्हें प्रबन्ध नहीं करना हैं, परन्तु उसके लिये उन्हें परमेश्वर पर भरोसा रखना हैं। उनके जीवन का मुख्य उद्देश प्रभु यीशु की सेवा करना हो और अन्य सभी बातें महत्वहीन हो।

इसी प्रकार के जीवन की शिक्षा सुसमाचार के पुस्तकों में दी गयी है, प्रेरितों के काम में उस पर अमल किया गया है और पत्रियों में उसकी व्याख्या की गयी है। इसकी अनुपम मिसाल स्वयम् प्रभु यीशु मसीह है।

परन्तु प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि 'मैं' कैसे इस पर अपने जीवन में अमल करुँ? मुझे क्या करना है?

(1) सब से पहले हमें अपने आपको प्रभु यीशु को सौंप देना हैं (2 कुरिन्थियों 8:5)। जब वह हमें स्वीकार कर लेता है, तब हमारा धन भी उसका हो जाता है।

(2) जब प्रभु हमारे जीवन के विभिन्न स्थानों पर ऊँगली रखता है, तब हमें तुरन्त सक्रिय होना ह। शायद वह हमारे दिल में महँगे होटल में खाने के विषय में बेचैनी उत्पन्न कर? या किसी महँगे खिलौने पर धन खर्च करने के विषय में निर्देश करें? जब हम किसी महँगे, बहमूल्य कार के नए मॉडल को देखते हैं, तब परमेश्वर एक साधारण कार खरीदने की संभावना दर्शाता है और यह चाहता है कि बचे हुए धन का हम परमेश्वर के सुसमाचार कार्य के लिये उपयोग करें। शायद वह हमारे पहनने ओढने के तरीकों में बदलाव लायें ताकि हम बहुत से लोगों को परमेश्वर की धार्मिकता का वस्त्र पहना सकें। हो सकता है, महँगे घरों के प्रति हम अपनी रुचि खो बैठे और सामान्य निवास में जाकर रहने लगे।

(3) तीसरी बात है, "जो कुछ वह तुम से कहे वही करना" (यूहन्ना 2:5)। संभव है मित्रों के मन में आपके लिये गलतफहमी हो। शायद आपके सगे–संबंधी आपकी निंदा करें। विभिन्न तरह की प्रतिक्रियाएँ प्रगट होगी। प्रभु यीशु के पीछे चलते रहिए, सब कुछ उस पर छोड़ दीजिए।

(4) वर्तमान जरुरतों की पूर्ति को छोड़ बाकी सब कुछ परमेश्वर की सेवा में लगा दीजिए। उससे पूछिए कि हम अपना धन कहाँ भेजें। वह आप का मार्गदर्शन करेगा।

परमेश्वर हम पर ऐसा अनुग्रह करें कि हम अपने जीवन में और अपनी पीढ़ी में इस तरह के मसीही समर्पण को लौटते हुए देख सकें। जॉन वेस्ली ने एक बार इस तरह प्रार्थना की :

काश कि परमेश्वर मुझे मनचाहा वर दे ! ताकि इस से पहले कि मैं यहाँ से विदा हों जाऊ और फिर दिखायी न दूँ, मैं उन लोगों को देखना चाहता हूँ जो पूर्ण रुप से परमेश्वर के प्रति समर्पित हैं, जो संसार के लिये क्रूस पर चढ़ाए जा चुके हैं, और जिनके लिये संसार क्रूस पर चढ़ाया हुआ है। ऐसे लोग जो अपनी आत्मा और शरीर में, अपनी भौतिक वस्तुओं के विषय में परमेश्वर के प्रति समर्पित हो। फिर मैं बड़े हर्ष के साथ यह कह पाऊँगा, "अब तू अपने दास को शान्ति से जाने देगा!"

प्रभु, मुझे तोड़!

"टूटा हुआ मन जो पिता के हाथ को नहीं रोकता, वह उस आत्मा में उपजाऊपन लाने वाला मौलिक तत्व है जिसमें वह कार्य करता है। वह हम में सामर्थ नहीं चाहता, परंतु हम में दुर्बलता खोजता है; प्रतिरोध करने वाली शक्ति नहीं देखना चाहता, परंतु 'समर्पण' चाहता है। सारी सामर्थ उसकी है : उसकी सामर्थ दुर्बलता में पूरी होती है।" —संकलित

भूमिका

एन्ड्रयू मरे ने *'ख्रीष्ट में बने रहना'* नामक पुस्तक लिखी, उसके तीस वर्ष बाद उसने कहा:

> मैं चाहता हूँ कि आप लोग इस बात को जानें कि मसीही सेवक अथवा लेखक अपने अनुभवों से कुछ ज्यादा ही कहता है। उस समय (जब उन्होंने *ख्रीष्ट में बनें रहना* का लेखन किया) जो कुछ मैंने लिखा था उन सभी बातों को मैंने अनुभव नहीं किया था। उन तमाम बातों को मैंने अभी पूर्ण रुप से अनुभव किया है ऐसा मैं नहीं कह सकता।

इसी बात को प्रेरित पौलुस ने भी लिखा है :

> यह मतलब नहीं कि मैं पा चुका हूँ, या सिध्द हो चुका हूँ, जिस के लिये मसीह यीशु ने मुझे पकड़ा था (फिलिप्पियों 3:12)।

प्रभु, मुझे तोड़ नामक इस लेख के विषय में मैं इसी अनुभूति की चर्चा करना चाहता हूँ। इन बातों को लिखने हेतु परमेश्वर ने मुझे बोझ प्रदान किया है।

यद्यपि मैंने सत्य को पूर्ण रुप से अनुभव नहीं किया है, फिर भी सत्य इतना उन्नत है, प्रयोजनीय है, आवश्यक है कि उसे रोका नहीं जा सकता। भले ही मैं इस सत्य के संपादन में कुछ अंश तक असफल रहा हूँ, परंतु जिन बातों को मैंने लिखा है वह मेरे हृदय की तीव्र इच्छा है।

विल्यम मॅकडोनल्ड

परमेश्वर टूटी हुई वस्तुओं को मूल्यवान जानता है।

सामान्यतया जब कोई चीज टूट जाती है तब उसका मूल्य या तो कम हो जाता है, या तो पूर्णरुप से नष्ट हो जाता है। टूटे हुए बरतन, टूटी हुई बोतलें, टूटा हुआ शीशा आदि वस्तुएं फेंक दी जाती है। फर्निचर आदि में दरार पड़ जाए या कपड़ा फट जाए तो उसका दुबारा बाजार में बेचा जाना मुश्कील हो जाता है। उनका मूल्य घट जाता है।

परंतु आत्मिक राज्य के नियम इस से भिन्न है। टूटी हुई वस्तुओं के लिये–खास कर टूटे हुए लोगों के लिये परमेश्वर ने विशेष पारितोषिक का प्रबंध किया है। उसके वचनों में हम पढ़ते हैं :

> यहोवा टूटे मनवालों के समीप रहता है, और पिसे हुओं का उध्दार करता है (भजन संहिता 34:18)।

> टूटा मन परमेश्वर के योग्य बलिदान है; हे परमेश्वर, तू टूटे और पिसे हुए मन को तुच्छ नहीं जानता (भजन संहिता 51:17)।

परमेश्वर घमण्ड़ी और हठीले लोगों का सामना करता है, वह दीन एवम् पिसे हुए लोगों का विरोध नहीं करता।

वह अभिमानियों का विरोध करता है, परंतु दीनों पर अनुग्रह करता है (याकूब की पत्री 4:6)। हमारा टूटा हुआ मन उसके तरस और सामर्थ को खींच लेता है।

सो हम पिसा हुआ मन, टूटी हुई आत्मा रखें, टूटा हुआ शरीर उसके पास लायें, यह उसका हमारे जीवन के लिये एक महान उद्देश्य है (2 कुरिन्थियों 4:6–18)।

परिवर्तन :
टूटे हुए हृदय का एक पहलू

हमारे जीवन में बदलाव आने से पहले पवित्र आत्मा जब हमें अपने पापों से अवगत कराने लगता है, उस समय हम इस टूटने की प्रक्रिया से गुजरते हैं। वह हमें एक स्थान पर लाता है जहाँ हम इस बात को अंगीकार करते हैं कि हम खो गये हैं, हम अपात्र हैं और नरक के योग्य हैं। हम अपना प्रत्येक कदम संघर्ष के साथ उठाते हैं। जब तक कि हमारा घमण्ड टूट कर चूर न हो जाए, हमारी अहंकारी जुबान खामोश न हो जाए और हमारी प्रतिकार क्षमता नष्ट न हो जाए, तब तक वह हमारा सामना करता है। क्रूस के कदमों के पास झुक कर हम कह सकते हैं, "प्रभु यीशु, मुझे बचाईए!" हमारी चालाकी पर नियंत्रण किया गया है, पापी व्यक्ति पर प्रभुता कर ली गयी है। घोड़े पर लगाम लगाया गया है।

घोड़ा स्वभावतः उदण्ड़ प्राणी है। जैसे ही हम उस पर लगाम लगाने की कोशिश करते हैं, वह उछल पड़ता है और लात मारता है, भागने का प्रयास करता है। भले यह जानवर सुंदर है, परंतु जब तक

वह नियंत्रित न किया जाए वह काम के लिये योग्य नहीं हैं। फिर उसके बाद उस पर लगाम डालने की पीड़ादायक प्रक्रिया आरम्भ होती है। एक बार यह लगाम डाल दिया जाता है और फिर उस घोड़े को जीवन जीने का उद्देश्य मिल जाता है।

इस विषय में यह समझ लेना बेहतर होगा कि प्रभु यीशु नासरत का बढ़ई था और उसने लकड़ी के जुए अवश्य बनाए होंगे। किसी ने बड़े ही सुन्दर ढ़ंग से सुझाया है कि यदि उसके दुकान की चौखट पर कुछ लिखा होता, तो संभवतः वह यह होता कि "मेरा जुआ अनुकूल है।" हमारा प्रभु आज भी जुओं को बनाता है। वह कहता है,

> मेरा जुआ अपने ऊपर उठा लो; और मुझ से सीखो, क्योंकि मैं नम्र और मन में दीन हूँ: और तुम अपने मन में विश्राम पाओगे। क्योंकि मेरा जुआ सहज और बोझ हलका है (मत्ती 11:29,30)।

जुआ उन लोगों के लिये है जो टूटे हुए हैं, नम्र और समर्पित हैं। उसके विषय में शिक्षा पाने से पहले हमारी इच्छाओं का दमन होना आवश्यक है। वह मन में नम्र और दीन था। हमें उसके समान बनना हैं, तभी हम अपने हृदय में विश्राम पा सकेंगे।

टूटे हुए हृदय के मूलतत्व

हमारे मन में कुछ प्रश्न उभर आते हैं, "टूटे हुए हृदय का अर्थ क्या है? विश्वासी के जीवन में यह गुण कैसे प्रगट होता है? उसके मूलतत्व क्या है?"

1. पश्चाताप, पाप का अंगीकार, क्षमा

प्रथम जिस विषय में हम सोचते हैं वह है परमेश्वर के सन्मुख पापों का अंगीकार करने की तैयारी, और उनके समक्ष जिनके विरोध में हमने गुनाह किया हैं? जिस व्यक्ति का हृदय टूटा हुआ है वह सहज ही पश्चाताप करता है। वह अपने पापों को छुपाने का प्रयास नहीं करता। "समय सब घावों को भर देता है" ऐसा कह कर वह अपने गुनाहों को भूलने का प्रयत्न नहीं करता। वह परमेश्वर की उपस्थिति में दौड़ कर चला आता है और पुकार उठता है, "हे प्रभु, मैंने पाप किया है।" उसके बाद वह उन लोगों से मिलता है जिन्हें उसके द्वारा चोट पहुँची है। वह कहता है, "मैनें गलती की है। मुझे खेद है। मुझे माफ कीजिये।" एक और बात वह जानता है कि क्षमा मांगने हेतु उसे कितना लज्जित होना पड़ा है, दूसरी ओर वह अनुभव करता है कि उसका विवेक साफ है और वह प्रकाश में चलता है।

सच्चा पापांगिकार, पाप को मुलम्मा चढ़ाने की कोशिश नहीं करता, और न ही उसकी सच्चाई को झुठलाने की कोशिश करता है। हठीले स्त्री के समान हम न कहे, "यदि मैनें कुछ गलती की है तो मैं क्षमा पाने की इच्छा रखती हूँ।" सच्चा पश्चाताप कहता है, "मैंने गुनाह किया है। मै यहाँ आया हूँ, ताकि आपसे क्षमा माँगू।"

दाऊद का जीवन पाप और असफलता की एक कहानी है, परंतु उसके पश्चातापी हृदय के कारण वह परमेश्वर को प्रिय रहा। भजन संहिता 32 और 51 में हम उसके पाप और गुनाहों के विषय में पढ़ते हैं। हम उस समय के विषय में जानते हैं जब उसने पश्चाताप करने से इन्कार किया था। हम देखते हैं कि उसके बाद उसका जीवन भौतिक, मानसिक और आत्मिक दुःखों से त्रस्त हो गया। ऐसा प्रतीत होता था कि सारे रास्ते बंद हो गये हैं। परतु अंत में उसका दिल टूट गया। उसने अपने पापों का अंगीकार किया और परमेश्वर ने उसे क्षमा प्रदान की। उसका जीवन फिर आनंद से भर गया और दाऊद ने अपना खोया हुआ गीत फिर पा लिया।

नये नियम की पुस्तक में, पौलुस टूटे हुए मन का उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह उस समय हुआ जब उसे मुख्य याजक और यरूशलेम में यहूदी धर्मसभा के सन्मुख उपस्थित होना पड़ा। उसने कहा कि "मैनें निरंतर बिलकुल सच्चे विवेक से जीवन बिताया है।" महायाजक को क्रोध आया और उसने पौलुस के मुँह पर थप्पड़ मारने का आदेश दिया। उत्तर में पौलुस ने कहा, "हे चुना फिरी हुई भीत, परमेश्वर तुझे मारेगाः तू व्यवस्था के अनुसार मेरा न्याय करने को बैठा है, और फिर क्या व्यवस्था के विरुध्द मुझे मारने की आज्ञा देता है?" (प्रेरितों के काम 23:3)। यह स्पष्ट उलहाना सुनकर सेवक दंग रह गए। क्या वह नहीं जानता था कि वह महायाजक से बोल रहा है? वास्तव में प्रेरित पौलुस यह नहीं जानता था। शायद हनन्याह ने अपने अधिकार–वस्त्र नहीं पहने थे, या वह अपने नियुक्त स्थान में नहीं बैठा

था। अथवा शायद पौलुस की दृष्टि फिर कमजोर पड़ गयी थी। कारण कुछ भी क्यों न हो उसने जान बूझकर बुरा नहीं कहा था। इसलिए तुरन्त उसने अपने शब्दों के लिये क्षमा मांग ली और निर्गमन 22:28 का संदर्भ देते हुए कहा, "परमेश्वर को श्राप न देना, और न अपने लोगों के प्रधान को श्राप देना"। पौलुस ने कहा, "मैने गलती की है। मैं माफी चाहता हूँ।" यह कह कर उसने अपनी आत्मिक परिपक्वता का परिचय करवाया।

2. नुकसान भरपाई

टूटे हुए हृदय के विषय से संलग्न है तुरन्त भरपाई पाने का विषय। यदि मैंने चोरी की है, नुकसान किया है, चोट पहुँचाई है या मेरी गलती की वजह से किसी की हानि हुई है, तो केवल क्षमा मांगना ही पर्याप्त नहीं है। न्याय यह चाहता है कि नुकसान की भरपाई की जाए। यह मेरे परिवर्तन के पहले की बात हो सकती है या मेरे परिवर्तन के बाद की भी।

जब जक्कय ने प्रभु यीशु को अपना उध्दारकर्ता मान लिया तब उसे वे सारी बातें याद आयी जो उसने महसूल वसूल करते समय की थी। ईश्वरीय प्रेरणा से उसने यह सीख लिया कि इन बातों को ठीक करना है। इसलिए उसने प्रभु से कहा, "यदि किसी का कुछ भी मैंने अन्याय करके ले लिया है तो मैं उसे चौगुना फेर देता हूँ। "यहाँ 'यदि' शब्द किसी प्रकार के संदेह या अनिश्चितता को प्रगट नहीं करता। वह कहना चाहता है कि "उस प्रत्येक व्यक्ति को जिस पर अन्याय करके मैंने लूट लिया है, वह सब मैं उसे चौगुना लौटा देता हूँ।" उसके परिवर्तन के फलस्वरुप वह लौटा देने का निश्चय करता है। "चौगुना" यह शब्द उसके नये जीवन की सामर्थ का परिमाण था। कभी कभी भरपाई कर देना असंभव होता है। कभी कभी सारे रिकार्ड नष्ट हो जाते हैं या समय के साथ निश्चित राशी भुला दी जाती है। परंतु परमेश्वर वे सारी बातें जानता है। वह चाहता है कि हम हर तरह से,

हर परिस्थिति में जिन–जिन बातों में ऋणी है वह सब लौटा दें।

और यह सब कुछ प्रभु यीशु के नाम में किया जाए। परमेश्वर को इस बात से महिमा नहीं मिलती कि हम केवल यह कहे, "मैनें यह चुराया है, मुझे खेद है। मैं तुम्हारा ऋण लौटाना चाहता हूँ।" इसके साथ साथ प्रभु यीशु की गवाही भी दी जानी चाहिये, "मैंने प्रभु यीशु मसीह को विश्वास के द्वारा ग्रहण किया है। परमेश्वर मुझसे उन हथियारों के विषय में बोल रहा है जो मैंने पांच वर्ष पहले आपके पास से चुराये थे। मैं क्षमा मांगने और उन हथियारों को लौटाने आया हूँ।" धर्म और दया के प्रत्येक कार्य के साथ प्रभु यीशु मसीह की गवाही प्रस्तुत की जानी चाहिये ताकि महिमा हमें नहीं, उसे मिले।

3. क्षमा करने वाला मन

टूटे हुए हृदय का तीसरा सिध्दांत है, जब कोई हमारे विरोध में भूल करता हैं तब हम क्षमा करने तैयार रहें। इसके लिये भी अनुग्रह की आवश्यकता है।

नये नियम की पुस्तक में दूसरों को क्षमा करने के विषय में स्पष्ट रुप से अनेक सूचनायें दी गई है।

सर्वप्रथम जब हमें चोट पहुँचाई गयी तब हमें तुरन्त अपने हृदय में उसे क्षमा कर देनी चाहिये (इफिसियों 4:32)। हम अब तक उसके पास नहीं गए है, न ही उसे यह कहा है कि हमनें उसे क्षमा किया है, परंतु वास्तव में हमने उसे अपने हृदय में क्षमा कर दी है।

> जिस क्षण कोई व्यक्ति मेरे विरोध में गुनाह करता है तब मुझे उसे क्षमा कर देना चाहिये। तब मेरा प्राण स्वतंत्र हो जाता है। यदि मैं उस घाव को अपने हृदय में थामें रहता हूँ, तो मैं परमेश्वर के विरोध में गुनाह करता हूँ और उस व्यक्ति के विषय में भी और इस प्रकार मैं परमेश्वर की ओर से क्षमा पाने में वंचित रह जाता हूँ। वह व्यक्ति पश्चाताप करें या न करें, अपने

> जीवन में सुधार लायें या न लायें, मुझ से क्षमा माँगे या न माँगे उससे कोई फर्क नहीं पड़ता, मैंने उसे तुरन्त क्षमा कर दी है। उसे अपने गुनाहों के विषय में परमेश्वर का सामना करना है, यह उसके और परमेश्वर के बीच की बात है। मेरा उससे कोई सरोकार नहीं, सिवाय इसके कि मुझे मत्ती 18:15 के अनुसार उसकी सहायता करना है। इसमें सफलता मिलें या न मिले, बल्कि इसके आरम्भ होने के पहिले, मुझे उसे क्षमा करना है (लेन्सकी)।

ऐसी कई बातें हैं जिन्हें क्षमा कर तुरन्त भूल जाना चाहिये। जब हम ऐसा करते हैं तो यह वास्तव में एक विजय सिध्द होती है। "प्रेम बुराई का हिसाब नहीं रखता और न ही अन्य लोगों की बुराईयों को कुरेदता है" (1कुरिन्थियों 1:7)। एक मसीही स्त्री ने एक बार पूछा, "उस दुष्ट स्त्री ने आपको जो कटुतापूर्ण शब्द कहे थे क्या उनका आपको स्मरण है?" उसने उत्तर दिया, "मुझे याद नहीं, और मुझे कुछ–कुछ याद है कि मैं उन्हें भूल गयी हूँ।"

यदि आपके विरोध में किया गया अपराध गंभीर है और आप सोचते हैं कि उसे छोड़ देना ठीक नहीं होगा तो आपको दूसरा कदम यह उठाना होगा कि आप उस व्यक्ति के पास जायें और उस विषय में उसके साथ चर्चा करें (मत्ती 18:15)। यदि वह पश्चाताप करता है तो आपको उसे क्षमा करना होगा। "यदि दिन भर में वह सात बार तेरा अपराध करें और सातो बार तेरे पास फिर आकर कहे, कि मैं पछताता हूँ तो उसे क्षमा कर" (लूका 17:4)। हम अनिश्चित रुप से उसे क्षमा करने तैयार रहें। हमें कई बार क्षमा की गयी है और की जाती है।

हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हम उस व्यक्ति के विषय में जाकर अन्य लोगों से कुछ न कहें (कई बार हम ऐसा करते हैं)। यह बात केवल दोनों के बीच में रहें। "हमें इन बातों को यथासम्भव गुप्त रखना हैं।"

जब हमारा भाई हम से माफी मांगता है, तब उसे हम बतायें कि हम ने उसे क्षमा कर दी हैं। आपने उसे अपने हृदय में क्षमा कर दी है। अब आप उसे क्षमा प्रदान कर सकते हैं।

परंतु मान लीजिये कि वह पश्चाताप करने से इन्कार करें? तो हम मत्ती 18:16 के अनुसार, "और एक दो जन को अपने साथ ले जा, कि हर एक बात दो या तीन गवाहों के मुँह से ठहराई जाए।"

यदि वह दो या तीन गवाहों की सुनने से इन्कार करें तो यह बात हम स्थानिक मसीही मण्डली के समक्ष रखें। इन सारी बातों का उद्देश बदला लेना या सजा दिलाना नहीं है, परन्तु उस भाई के साथ पहले के समान सम्बंध बनाना है।

परन्तु यह अंतिम प्रयास भी असफल रहा तो वह व्यक्ति महसूल वसूल करने वालों के समान और अन्य जातियों के सदृश्य माना जायें। अब उसकी स्थानिक कलीसिया के साथ सहभागिता नहीं रही। क्योंकि वह मसीही व्यक्ति के समान आचरण नहीं रखता। हम उसे उसके गलत आचरण के कारण उसी रुप में ग्रहण करें। वह अविश्वासी माना जायें। जिस समय वह पश्चाताप करता है, उसी समय हम उसे क्षमा करें और उसे अपनी सहभागिता में ग्रहण करें।

परमेश्वर क्षमा न करने के स्वभाव से, मन में कटुत्व रखने से और बीती बातों को न भुलने की आदत से तिरस्कार करता है। यह उस सेवक के दृष्टांत से स्पष्ट होता है (मत्ती 18:23–35)। वह स्वयम् दिवालिया हो गया था और राजा ने उसे लाखों डॉलर्स माफ कर दिए। परन्तु वह अपने संगी नौकर को ऋण–मुक्त करना नहीं चाहता। यहाँ शिक्षा स्पष्ट है। जब हमारे सिर पर ऋण का बोझ था तब परमेश्वर ने हमें क्षमा की, हमें भी अपने ऋणदाताओं का माफ करना सीखना है।

4. पलटा न लेते हुए बुराई को सह लेना

टूटे हुए हृदय के और भी पहलू हैं। वह है दीन आत्मा जो भलाई

करने के कारण दुःख उठाती है, परन्तु बदला नहीं लेती। यहाँ प्रभु यीशु हमारा मुख्य उदाहरण है।

> वह गाली सुनकर गाली नहीं देता था, और दुःख उठाकर किसी को भी धमकी नहीं देता था, पर अपने आप को सच्चे न्यायी के हाथ में सौंपता था (1 पतरस 2:23)।

इस प्रकार के जीवन के लिये हमें बुलाया गया है।

> "क्योंकि यदि कोई परमेश्वर का विचार करके अन्याय से दुख उठाता हुआ क्लेश सहता है, तो यह सुहावना है। क्योंकि यदि तुम ने अपराध करके घूसे खाए और धीरज धरा, तो इस में क्या बड़ाई की बात है? पर यदि भला काम करके दुख उठाते हो और धीरज धरते हो, तो यह परमेश्वर को भाता है" (1 पतरस 2:19–20)।

'फ्राम ग्रेस टू ग्लोरी' नामक अपनी पुस्तक में मुर्डोक कॅम्पबेल हमें स्मरण दिलाता है कि जॉन वेस्ली की पत्नी ने उसका जीना दुभर कर दिया था। घण्टों तक वह उसके बालों को पकड़े उसे कमरे में जमीन पर घसीटती रहती थी। परन्तु मेथडिस्ट मण्डली के संस्थापक ने उसके विरोध में उफ् तक नहीं कहा।

कॅम्पबेल और एक उदाहरण प्रस्तुत करता है। "एक धर्मी सेवक ने इसी तरह की स्त्री से ब्याह कर लिया। वह एक दिन अपने कक्ष में बाइबल पढ़ रहा था। द्वार खोल कर उसकी पत्नी बाहर आयी। उसने वह बाइबल छिन ली और आग में फेंक दी। उसने शान्तिपूर्ण ढंग से उसकी आँखों में देखा और कहा, इस से पूर्व कभी मैं इस तरह की गर्माहट में नहीं बैठा था। इस उत्तर ने उसके क्रोध को बदल दिया और उनके जीवन में एक नया अध्याय खुल गया। इज़बेल लीडिया बन गयी। काँटा सोसन के फूल में बदल गया।"

> परमेश्वर के किसी महान सेवक ने कहा है, "बिना वजह दोषी ठहराया जाना और उसे सह लेना नम्रता का प्रतीक है।

अपमान और अन्याय को खामोशी के साथ सह लेना अपने प्रभु का अनुसरण करना है। "हे प्रभु, आपका दोष न रहते हुए भी आपने कितने दुःख उठाए, जब मैं यह सोचता हूँ तो यह जान लेता हूँ कि मैं खुद को बचाने में कितनी जल्दबाजी करता हूँ। जब आपके विषय में इतनी अधिक बुरी बातें सोची गयी, भला–बुरा कहा गया, तो यह असंभव है कि कोई मेरे विषय में भला कहे या सोचें ऐसी मैं चाह रखूँ।

5. बुराई का बदला भलाई से

टूटे हुए हृदय के जीवन में उन्नतिपथ पर आगे बढ़ते हुए हमें न केवल बुराई को सह लेना हैं, परन्तु प्रत्येक अन्याय के बदले प्रेम और दया का प्रदर्शन किया जाए।

"बुराई के बदले किसी से बुराई न करो, जो बातें सब लोगों के निकट भली है, उनकी चिन्ता किया करो।. . .परन्तु यदि, तेरा बैरी भूखा हो, तो उसे खाना खिला; क्योंकि ऐसा करने से तू उसके सिर पर आग के अंगारों का ढेर लगाएगा। बुराई से न हारो, परन्तु भलाई से बुराई को जीत लो" (रोमियो 12:17,20,21)।

मुझे एक बात याद आती है। हिन्दुस्थान की सड़क पर एक आदमी अपने हाथी को खींचता चला जा रहा था। उसके हाथों में धारदार अंकुश था जिस से वह उस हाथी को आगे बढ़ाता था। अचानक उसके हाथों से वह अंकुश खनकता हुआ गिर पड़ा। हाथी ने तुरन्त पीछे मुड़ कर अपनी सोंड से वह अंकुश उठाया और अपने स्वामी के हाथ में दिया। यदि वह हाथी मसीही बर्ताव कर सकता है तो हम क्यों नहीं कर सकते?

6. खुद से अधिक दूसरों को आदर देना

टूटे हुए हृदय का और एक चिन्ह है–दूसरों को अपने से अच्छा समझना (फिलिप्पियों 2:3)। हम इब्राहीम के जीवन में घटित एक घटना के विषय में पढ़ते हैं (उत्पत्ति 13:1–13)। वह और लूत अपने

परिवार और सम्पत्ति के साथ मिस्त्र से नेगेब और फिर बेतल की ओर चल पड़े। दोनों के पास भेड़–बकरी और गाय–बैल थे और दोनों के चरवाहों में झगड़ा हुआ। तब इब्राहीम ने लूत से कहा, "देखो, लूत, हम थोड़ी सी घाँस पर से एक दूसरे से बिछुड न जाएँ। जो चरागाह तू चाहता है, चुन ले, मैं और कहीं अपने जानवर ले जाऊँगा।" सो लूत ने यरदन नदी के पास वाली हरीभरी तराई देखी जो सदोम के निकट थी। उदार मन वाला इब्राहीम आगे कनान की ओर बढ़ गया। सो पिन्तेकुस्त की दूसरी छोर पर रहने वाले पुराने नियम के सन्तों ने हमारे सन्मुख पौलुस के कथन का प्रात्याक्षिक प्रस्तुत किया है :

> "भाईचारे के प्रेम से एक दूसरे से मया रखों, परस्पर आदर करने में एक दूसरे से बढ़े चलो" (रोमियों 12:10)।

7. शीघ्र आज्ञापालन

परन्तु यह सब कुछ नहीं है। परमेश्वर चाहता है कि उसकी इच्छा को ग्रहण करें और उसकी आज्ञा का पालन करें। भजन का रचियता स्पष्ट शब्दों में कहता है :

> "तुम घोडे और खच्चर के समान न बनों जो समझ नहीं रखते। उनकी उमंग लगाम और बाग से रोकनी पड़ती है, नहीं तो वे तेरे वश में नहीं आने के" (भजन संहिता 32:9)।

उम्दा घोड़ा बन्दूक की नोक से उछल पड़ता है। खच्चर स्वभावतः हठी और अदम्य होता है। इस तरह परमेश्वर की इच्छा के संदर्भ में हमारे पास दो तरह के खतरे होते हैं। स्पष्ट मार्गदर्शन के बिना आगे बढ़ना, बिना संकेत मिले दौड़ पड़ना। उसी तरह परमेश्वर के स्पष्ट मार्गदर्शन का प्रतिरोध करना भी संभव है। योना का उदाहरण लीजिये। परमेश्वर उसके द्वारा क्या करना चाहता था इस विषय में कोई सन्देह नहीं था। उसे नीनवे को जाकर पश्चाताप का सन्देश सुनाने के लिये बुलाया गया था। परन्तु अब तक वह परमेश्वर

द्वारा तोड़ा नहीं गया था। वह विरुद्ध दिशा में जाने वाले जहाज में बैठ गया। मछली के पेट में जो अनुभव उसने पाया, उसके द्वारा वह आज्ञा मानना सीखा। उसके पश्चात ही वह यह प्रमाणित करने आगे बढ़ा कि परमेश्वर की इच्छा भली, और भावती और सिद्ध है (रोमियों 12:2)।

हमारे पास और एक चित्र है उस गधी के बच्चे का जिस पर यीशु सवार होकर यरुशलेम नगर में फिरा (लूका 19:29–35)। अब तक उस पर कभी कोई सवार नहीं हुआ था, और उस पर प्रथम बार सवार होने वाले व्यक्ति का वह विरोध कर सकता था। परन्तु जब प्रभु यीशु उसके निकट गया तब उसने तुरन्त नियंत्रित होने का अनुभव किया। उत्पन्नकर्ता की इच्छा के आगे वह पूर्ण रुप से समर्पित हो गया।

शायद हम यहाँ मिट्टी का रुपक ले सकते हैं। प्रभु यीशु के हाथों में टूटे हुए व्यक्ति और कुम्हार के हाथों में मिट्टी दोनों उदाहरण समान्तर है –दोनों अपने कर्ता की उँगलियों के वश में है। समर्पित संत की यह प्रतिदिन की प्रार्थना है;

अपना कार्य कर, प्रभु! अपना कार्य कर!
तू है कुम्हार, मैं मिट्टी हूँ।
मुझको रचा, अपनी इच्छा के अनुरुप
मुझ को बना,
मैं देखता हूँ राह, दीन और होकर लीन!

अपना कार्य कर, प्रभु! अपना कार्य कर!
मुझे खोज, मुझे परख, मेरे स्वामी आज।
बर्फ से श्वेत प्रभु, मुझको धो अभी,
तेरे सामने मैं झुक जाता हूँ।

अपना कार्य कर, प्रभु, अपना कार्य कर!
घायल और थका, सहायता कर,
प्रार्थना करता हूँ !
सामर्थ–सारी सामर्थ–सब तेरी है!
मुझे छू ले, चंगाई दे, हे तारणहार!

अपना कार्य कर, प्रभु, अपना कार्य कर!
मेरे जीवन पर नियंत्रण कर!
ताकि देखें वें, केवल यीशु को,
सदा, सदा जो मुझ में जीवित है!

8. जाहिर नाम के लिये मृत्यु

टूटे हुए हृदय के अनेक पहलू हैं। हमें उस स्थान पर पहुँचना है जहाँ हम संसार की प्रशंसा और तिरस्कार के लिये मर चुके हैं। उद्धार पाने के बाद डब्लू.पी. निकल्सन, सॅल्वेशन आर्मी के एक अफसर के संरक्षण में आया। एक दिन उस अफसर ने उसे कहा, "यदि आप परमेश्वर के कार्य के लिये गंभीर हो, तो यह चिन्ह पहनकर शहर के मध्य में कुछ घण्टे घूम कर आओ।" ***"सार्वजनिक राय के लिये मरा हुआ"*** यह अक्षर उस चिन्ह पर खुदे हुए थे। इस अनुभव ने निकल्सन के जीवन पर गहरा प्रभाव डाला और वह निर्भयता के साथ प्रभु की सेवा में लग गया।

9. दूसरों के पापों को अपने पाप के रुप में कबूल करना

हमें इतना अधिक टूट जाने की आवश्यकता हैं कि हम परमेश्वर के लोगों के पापों को अपने पाप के रुप में ग्रहण करें। यही दानिएल ने किया (दानिएल 9:3–19)। जिन पापों को उसने सूचीबद्ध किया उसमें से कई पापों को उसने व्यक्तिगत रुप में नहीं किया था। उसने खुद को इस्राएल राष्ट्र के साथ पूर्ण रुप से समांतर मान लिया, उनके पाप उसके पाप बन गये। वह हमें इस बात का स्मरण दिलाता है कि "उसने हमारे पापों को और हमारे दुःखों को उठा लिया और उन्हें अपने पाप मान लिया।" यहाँ हमें एक शिक्षा मिलती हैं कि दूसरों की आलोचना करने बजाय, उन पर दोष लगाने के बजाय, हम उनके पापों को इस तरह कबूल करें कि मानो वे अपने ही पाप हो।

10. संकट में भी शांत और धीरजवान बने रहना

टूटे हुए हृदय का और एक पहलू है–वह जीवन के हर संकट

में स्वस्थचित्त और धीरजवान बना रहता है। जब विलंब होता है तब हम स्वभाववश चिड़चिड़ाहट का प्रदर्शन करते हैं। जब हमारे प्रतिदिन के कार्य में बाधा उत्पन्न होती है तब हमारा मन क्रोध और उद्विग्नता से संतप्त हो जाता है। दुर्घटनाएँ हमें विचलित करती हैं, वे हमारे मन में जलजलाहट उत्पन्न करते हैं। हमारे कार्यों में बदलाव आता हैं और निराशा हमारे मन के समस्त कड़वाहट को प्रगट करती है। क्रोध, चिड़चिड़ाहट, उन्माद, उद्विग्नता आदि बुराईयाँ हमारे मसीही गवाही के लिये हानिकर हैं। टूटा हुआ मन इन समस्त संकटो में स्वस्थ बना रहता है, यह जानते हुए कि परमेश्वर अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये सारी परिस्थितियों को दूर करता जाता है। रास्ते में ही आपकी गाड़ी का चक्का पंक्चर हो गया, परन्तु उसके कारण आप बड़ी दुर्घटना से बच गए। क्या यह आशिष नहीं? अचानक कोई आकर आपकी सेवकाई में रुकावट लाता है, परन्तु वही व्यक्ति आपके लिये अधिक महत्वपूर्ण सेवकाई का रास्ता खोलता है। हो सकता है दुर्घटनाओं के द्वारा, उसके साथ जुड़ी पीड़ाओं के द्वारा, असुविधा और अपव्यय के कारण ऐसे कुछ लोगों के सम्पर्क में हम आते हैं जिन्हें पवित्र आत्मा ने आपके द्वारा सुसमाचार को ग्रहण करने हेतु तैयार किया है। इन सारी परिस्थितियों में प्रभु चाहता है कि हम अधीरता के बदले स्वस्थ मन रखें और हठीलेपन के बदले टूटे हुए हृदय का परिचय दें।

टूटे हुए मन का क्या अभिप्राय है, उसका यह उदाहरण है। यह सूची एक सुझाव सामने रखती है। जब हम परमेश्वर के साथ संगति में आगे बढ़ते हैं, तब वह हमारे व्यक्तिगत जीवनों में ऐसे स्थान की ओर निर्देश करता है जहाँ हम उसके क्रूस के तले टूट जाते हैं। और प्रत्येक प्रकाशन के साथ वह हमें आवश्यक अनुग्रह प्रदान करता हैं।

> क्योंकि परमेश्वर ही है जिसने अपनी सुइच्छा निमित्त तुम्हारे मन में इच्छा और काम दोनों बातों के करने का प्रभाव डाला है (फिलिप्पियों 2:13)।

टुटे हुए मन का क्या अभिप्राय नहीं है

टूटे हुए हृदय के कुछ पहलुओं पर विचार करने के पश्चात अब हम देखेंगे कि टूटे हुए मन का अर्थ क्या नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति अति लीन, भोलें, सदा नमनीय, सदा झुकनेवाले और निरंतर क्षमा की भीख माँगने वाले बन जाएँ। इसका अर्थ यह नहीं कि वह सामर्थ्यहीन होकर शून्य में बदल जाता है, वह अन्य लोगों पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकता। इसके विपरीत टूटा हुआ व्यक्तित्व मजबूत चरित्र का सुन्दर प्रतीक है। उदण्ड़ बने रहने के लिये कोई शिक्षा नहीं है। परन्तु प्रभु यीशु की समानता में बदलने हेतु आत्मनियंत्रण की आवश्यकता होती है, जबकि सभी स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ उसका विरोध करती है।

टूटे हुए मन के लोग नम्र चरित्र के होते हैं। उनके जीवन के द्वारा स्वर्गीय सामर्थ धीरे–धीरे अन्य लोगों को प्रभावित करती है। यहाँ विरोधाभास है, परन्तु इस में सच्चाई है : "तेरी नम्रता ने मुझे महत्व

दिया है" (भजन संहिता 18:35)। और समय पड़ने पर वे अपने क्रोध का प्रदर्शन कर सकते हैं। यह हम प्रभु यीशु के जीवन में पाते हैं। उसने रस्सी का कोड़ा बनाकर सराफों को मंदिर से बाहर भगाया। परन्तु महत्वपूर्ण बात यह है कि उसे चोट पहुँची थी इस कारण उसने अपना क्रोध प्रगट नहीं किया, परन्तु क्योंकि परमेश्वर के भवन का अनादर हो रहा था इसलिये उसने कोड़ा उठाया। ऐसा कहा गया है कि "वह परमेश्वर के कार्य के लिये शेर था, परन्तु अपने आप में मेम्ना था।" कई शहीद और धर्म के सुधारक टूटा हआ व्यक्तित्व धारण किए हुए थे, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि वे दुर्बल और प्रभावहीन थें।

दो पीढ़ियों के बीच दरार

माता–पिता और बच्चों के आपसी सम्बधों के बीच टूटे हुए व्यक्तित्व का परिचय कराना अत्यन्त कठिन बात है। कई बार हम अपने पतीत स्वभाव के कारण अपने सर्वाधिक निकटतम सम्बन्धियों के साथ कटुता का व्यवहार करते हैं। कई मसीही लड़कियाँ मानसिक रुप से सदा संघर्षरत रहती है क्योंकि उनके मन में अपनी माता के प्रति विरोधभाव होता है। और कई मसीही जवान अपने पिता के प्रति शायद ही सद्भाव रखते हैं। दो पीढ़ियों के बीच जो दरार है उसके विषय में कोई मतभेद नहीं। जवान लोग यह शिकायत करते हैं कि उनके मातापिता उन्हें समझते नहीं, वे हम पर दबाव डालते हैं। वे समय के साथ चलना नहीं जानते। वे रुढ़ीवादी ह। इसके बावजूद, कई जवान अपने मन में अपराध भाव और लज्जा महसूस करते हैं कि मसीही होने के नाते इन दुर्भावनाओं पर विजय पाकर अपने माता–पिता के प्रति मनःपरिवर्तन अनुभव करें। वे पराजय महसूस करते है कि अपने वरीष्ठों और वृद्धों के प्रति वे परम दयालता और नम्रता का भाव रखते हैं, परन्तु अपने घर में उनका व्यवहार उदासीन और हठीला होता है। अपने मातापिता के मृत्यु की चाह रखने का उन्हें अफसोस होता है, परन्तु दीन होकर अपने गलतियों का अंगीकार करना उन्हें कठिन लगता है।

जब परमेश्वर ने इस्राएल राष्ट्र को दस आज्ञाएँ दी तब उनमें से एक, मनुष्य के आपसी सम्बंधों के विषय में है:

> "तू अपने पिता और अपनी माता का आदर करना, जिस से जो देश तेरा परमेश्वर यहोवा तुझे देता है उसमें तू बहुत दिन तक रहने पाए" (निर्गमन 20:12)।

पौलुस इसी आज्ञा को नए नियम में दोहराता है:

> "हे बालकों, प्रभु में अपने मातापिता के आज्ञाकारी बनो, क्योंकि यह उचित है। अपनी माता और पिता का आदर कर (यह पहिली आज्ञा है जिसके साथ प्रतिज्ञा भी है कि तेरा भला हो और तू धरती पर बहुत दिन जीवित रहे" (इफिसियों 6:1–3)।

अपने माता पिता के आज्ञाकारी होने का, उनका आदर करने का अर्थ केवल इतना ही नहीं कि उनकी आज्ञा का पालन करना, उनका आदर करना, परन्तु उनसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करना, और समय आने पर उनकी देखभाल करना। पौलुस इसके चार कारण प्रस्तुत करता है:

- यह उचित है
- यह जवानों के लिये भला है
- यह वचन में लिखा है
- यह बहुतायत के जीवन के लिये सहायक है।

परन्तु कई जवान लड़के और लडकियाँ इस विचार के प्रति दृढ़ है कि भले ही अन्य बातों में यह संभव है, परन्तु उनके मामले में असंभव है। उनके मातापिता दमनकारी, पुराने विचारोंवाले हैं।

यहाँ टूटे हुए मन की आवश्यकता है। इसका अर्थ है अपने माता पिता के पास जाकर कहना, "मुझे खेद है कि हमारे आपसी रिश्तों में मैं रोढ़ा बनकर खड़ा रहा। आपने जो कुछ मेरे लिये किया उसके लिये मैंने आपको कभी धन्यवाद नहीं दिया। मैं अभी यह करना चाहता हूँ। मुझे क्षमा कीजिए कि मैंने हमारे सम्बंधों के बीच विरोध की दीवार खड़ी की। परमेश्वर की सहायता से सारी बातें बदल जाएँ यह म चाहता हूँ।"

उड़ाऊ पुत्र की कहानी पीढ़ियों के बीच पड़ी दरार को मिटा देती हैं। आरम्भ में वह कृतघ्न पुत्र अपने पिता की मृत्यु तक राह देखने से इन्कार करता है। वह अपनी विरासत का धन तुरन्त पाना चाहता था। उसे वह मिल भी गया। उसके बाद वह चैन और विलास का सिलसिला, वो पार्टियाँ, और नशाखोरी और व्यभिचार का दौर आरम्भ हुआ। और सारा धन खत्म हो गया, उसके साथ मित्र भी चल दिए। उसके पास निर्वाह के लिये भी पैसे न रहे। वह अपने पिता के घर के सेवकों के विषय में सोचने लगा जिनका जीवन उस से बेहतर था। कितना मूर्ख था वह! उसने भरपूर होकर घर छोड़ा, परन्तु खाली होकर लौटा! न्याय का दावा करते हुए उसने घर त्यागा था, परन्तु अब वह दया की याचना करता हुआ लौटता है। सीना तान कर उसने घर त्यागा, परन्तु टूटा हुआ मन लेकर लौट गया।

"पिताजी," वह कहता है, "मैंने तेरे विरोध में और परमेश्वर के विरोध में पाप किया है। मैं तेरा पुत्र कहलाने योग्य नहीं हूँ . ." वह और कुछ कहना चाहता था, दास की नौकरी के लिये बिनती करना चाहता था। परन्तु उसी समय पिता ने घर में आदेश जारी कर दिए थे। और जल्द ही बेटे को नया वस्त्र पहनाया गया। उसकी उँगली में अँगुठी पहनायी गयी, नये जूते पहनाये गए। जल्द ही उसे भोजन की मेज पर सुस्वादू भोजपदार्थों के साथ बैठाया गया। टूटे हुए व्यक्तित्व ने उनके बीच की दरार को मिटा डाला था। यदि वह बेटा पश्चाताप के साथ अंगीकार न करता, टूटा हुआ मन लेकर पिता के कदमों में गिर न पड़ता तो पिता के चुंबन और आलिंगन का अनुभव न कर पाता।

जब तक हम नम्र होकर क्षमा याचना नहीं करेंगे, तब तक हमारे मन से विरोधभाव नष्ट नहीं होगा। दूसरी बार अपने माता पिता के प्रति वह द्वेषभाव नहीं रख पायेगा, क्योंकि टूटने की लज्जा का अनुभव का स्मरण उसकी आंखों के सामने निरंतर बना रहेगा। और यह स्मरण एक प्रभावी प्रतिबंधक के रुप में कार्य करेगा।

वैवाहिक जीवन में मतभेद

दूसरी कठिन बात है पति–पत्नी के सम्बन्धों के बीच टूटे हुए व्यक्तित्व का परिचय कराना। यहाँ भी हम अपने प्रिय से दुर्व्यवहार का भाव रखते हैं, जबकि अनजान लोगों के साथ हमारा बर्ताव प्रेम और आदर से युक्त होता है। कई बार हमें यह कबूल करना होता हैं कि हम घर में शैतान और बाहर सन्त होते हैं।

विवाह–सम्बन्धों में आपसी तनाव की संभावना के प्रति बाइबल यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाती है। हम कुलुस्सियों 3:19 में देखते हैं:

> "हे पतियों, अपनी अपनी पत्नी से प्रेम रखो,
> और उनसे कठोरता न करो।"

कई बार पति के मन में पत्नी के प्रति इतनी कड़वाहट होती है कि वह इस भाव से उभर नहीं पाता। वह हिम्मत छोड़ देता है और अलगाव या विवाह–विच्छेद के द्वारा छटकारा पाने का प्रयास करता है।

जेनो और जिंक्स का उदाहरण लीजिये। जब वे प्रथम बार मिले, तब उन्हें लगा कि वे एकदूसरे के लिए बनाये गए हैं। आने वाले कुछ महीने वे हर समय साथ साथ रहे। छः माह बाद उनकी सगाई हो गई और छः माह बाद उनका विवाह होना तय हुआ। परन्तु बात

कुछ ऐसी हुई कि चार महीने के बाद ही उनका विवाह हो गया।

और प्रत्येक ने अपने–अपने स्थान पर इस विवाह में उचित भूमिका निभायी। प्रथम वर्ष सब कुछ ठीक रहा। परन्तु एक दिन दोनों के बीच जबरदस्त लड़ाई हुई और विवाह के पहले जो कुछ हुआ था उस विषय को लेकर जिंक्स ने जेनो के प्रति अपने मन में छिपे हुए अनादर के भावों की कड़वाहट उंड़ेल दी। इसका प्रत्युत्तर जेनो ने भी कुछ इसी तरह दिया। घर की दीवारें कांप उठी। उसके बाद ऐसा प्रतीत हुआ कि उनका विवाह विनाश के पथ पर है। जेनों को अनुभव हुआ कि जो कड़वाहट वह अपनी पत्नी के प्रति अनुभव कर रहा था वह उस प्रेम से जो उसने उससे किया था, कई गुना अधिक थी (2 शमुएल 13:15)।

मित्रों ने सुझाव दिया कि वे मसीही विवाह सलाहागार की सहायता ले। उन्होंने वैसा ही किया। परन्तु उनका मन कठोर और उद्दण्ड बना था।

अंत में जेनों ने विवाह विच्छेद के लिये याचिका दायर की। परन्तु उनके न्यायालय में पहुँचने से पहले एक मसीही मित्र ने उसे चुनौती दी कि वह परमेश्वर के सामने टूट जाएं। उसी समय उस मित्र की पत्नी वही संदेश लेकर जिंक्स के पास पहुँची परमेश्वर के सामने और एक दूसरे के सामने क्यों नहीं टूट जाते? अतीत को प्रभु यीशु के लोहू के नीचे रखकर नये जीवन का आरम्भ क्यों न करें?

दोनो ने उनकी सलाह मान ली। यह अत्यन्त कठिन बात थी। परन्तु दोनों ने एक दूसरे से मिलकर अपनी गलतियों का अंगीकार किया। उन्होंने आपस में कुछ भी छिपा न रखा। अपनी सफाई भी पेश नहीं की। वह स्पष्ट अंगीकार था। विवाह पूर्व जो पाप उन्होंने किया था उसके प्रति दोनों ने अपनी समान जिम्मेदारी कबूल की। आँसुओं के साथ उन्होंने अपने पापों का इकरार किया और फिर कभी ऐसा न करने की प्रतिज्ञा की।उसने उन्हें क्षमा प्रदान की है इस बात को

उन्होंने स्वीकार किया (यूहन्ना 1:9)। और हर बात के लिये उन्होनें एक दूसरे को क्षमा की। उन्होंने यह भी तय किया कि वे अपने आपको क्षमा करेंगे। जब उन्होंने प्रार्थना समाप्त की, तब उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि उनका बोझ हट गया है। और कटुता और कलह के बादल मिट गए हैं। सुलह के लिये पर्याप्त समय था। टूटे हुए हृदय की उन्हें भविष्य में भी आवश्यकता महसूस हो सकती है इस बात को उन्होंने मान लिया।

कई महीनों के बाद जेनो ने शाम का समाचारपत्र नीचे रखते हुए कहा कि यह कितनी अजीब बात है कि लोग अपना समय और धन विवाह–सलाहागारों पर और मनोवैज्ञानिकों पर व्यय कर देते हैं और बड़े महंगे उपायों की खोज में रहते हैं। परन्तु कितना बेहतर होगा कि वे मन की दीनता का मार्ग स्वीकार करें क्योंकि टूटे हुए व्यक्तित्व के बिना अन्य सभी बातें प्रभावहीन सिद्ध होती हैं।

परमेश्वर चाहता है कि हम सब उसके सन्मुख टूट जाएं

न केवल माता–पिता एवम् बच्चों के सम्बंध में या पति और पत्नी के सम्बंधो में, बल्कि जीवन के हर एक क्षेत्र में हम टूटी हुई मानसिकता का अनुभव करें। जिस प्रकार उसने पनिएल में याकूब के साथ संघर्ष किया, उसी प्रकार वह हमसे भी लड़ेगा। वह हमारे घमण्ड़ को, हमारी स्वेच्छा को, हमारी क्षमाहीनता को, हठीलेपन और बकवास करने की आदत को, बुराई करने की आदत को, सांसारिकता को, अशुद्धता और क्रोध और शरीर की हर बुरी लालसाओं को तोड़ना चाहता है। वह हमारे नाम को बदलकर इस्राएल रखना चाहता है याकूब का अर्थ है धोखाधड़ी करने वाला, जाल रचने वाला, परन्तु परमेश्वर हमें बदल कर राजकुमार बनाना चाहता है जो परमेश्वर से और मनुष्यों से भी युद्ध करके प्रबल हुआ हो। वह भोर होने तक हमसे लड़ता रहेगा और हमारी जांघ की नस पर प्रहार करेगा। और फिर हम सारा जीवन टूटे हुए मनुष्य की भाँति परमेश्वर के कार्य के लिये लंगड़ाते हुए चलेंगे, एक टूटे हुए व्यक्तित्व के रुप में।

परमेश्वर चाहता है कि हम निर्दोष पाए जायें। हममें से कोई भी निष्पाप नहीं रह सकता, परन्तु हम दोषमुक्त रह सकते हैं। निर्दोष व्यक्ति वह है जो गलती करने के बावजूद भी, तुरन्त उसमें सुधार लाता है। वह अपने क्रोध पर सुरज नहीं ढलनें देता। पापों को कबूल कर और क्षमा मांगकर वह अपने संबंध को परमेश्वर के साथ और अपने सहयोगियों के साथ बनाए रखता है। कलीसिया का अगुवा *निर्दोष हो* (1 तीमुथियुस 3:2)। प्रत्येक मसीही व्यक्ति भी।

परिणामों पर विचार करें

यदि हममें से प्रत्येक जन इस प्रकार टूटे हुए हृदय का अनुभव करेंगे तो इसका प्रभाव हमारे व्यक्तिगत जीवन में, हमारे घरों में, हमारी कलीसियाओं में, और हमारे व्यापार के स्थानों में क्या होगा इस पर विचार करें।

हमारे जीवन में हम अधिक सामर्थ, अधिक आनंद और बेहतर स्वास्थ्य का अनुभव करेंगे। जो लोग अन्य लोगों पर विशेष आत्मिक प्रभाव डालते हैं वे लोग नम्रता और दीनता के साथ प्रभु यीशु के साथ जुए में बंधे हैं। वे उसकी सेवा करने में आनंद और पूर्णता का अनुभव करते हैं। जो बातें हमारे आत्मिक जीवन के लिये उचित हैं, वही बातें हमारे शरीर के आरोग्य के लिये भी हितकर हैं। 'द ब्रिटिश मेडिकल जरनल' में इस प्रकार समाचार छपा था कि, "मनुष्य के शरीर में ऐसा एक भी तन्तू नहीं है जो उसकी आत्मा से जुड़ा हुआ न हो।" डॉ. पॉल टर्नियर एक रोगी के विषय में बताते हैं। इस व्यक्ति को कई महीनों से रक्ताल्पता की शिकायत थी। अचानक यह शिकायत दूर हो गयी और उसके शरीर में रक्त का पुनः संचार हो गया। छानबीन के दौरान यह ज्ञात हुआ कि यह स्त्री किसी आत्मिक संकट में थी, और उसने काफी समय से जो कड़ुवाहट मन में पाल रखी थी उससे उसने क्षमा प्रदान करने के द्वारा छुटकारा पा लिया था। जी हाँ, टूटा हुआ

व्यक्तित्व शरीर के लिये स्वास्थ्यकर है।

उस परिवार के विषय में सोचिए जहाँ घर के सदस्य छोटी–छोटी बातों के विषय में शिकायत रखते ह। परन्तु इन मतभेदों को वे बढ़ावा नहीं देते। आपसी सुलह और पवित्र चुम्बन का महत्व इस परिवार ने सीख लिया है। प्रभु यीशु इस प्रकार के परिवारों में रहना पसंद करता है।

स्थानिक कलीसिया में टूटा हुआ व्यक्तित्व ही आत्मिक जागृति का मार्ग है। आत्मिक संसार में यह नियम निश्चित है कि आशिषों की वर्षा से पहले टूटे हुए हृदय के आँसुओं की वृष्टि नितांत आवश्यक है। हम अन्य सभी बातों को पहले अपना लेते हैं– नया भवन, नयी सभाएँ, नयी प्रणालियाँ, परंतु परमेश्वर पश्चाताप और दीनता की बाट जोहता है। जब हम पश्चाताप करते हैं तब आशिष बह निकलती है।

> तब यदि मेरी प्रजा के लोग जो मेरे कहलाते हैं, दीन होकर प्रार्थना करें, और मेरे दर्शन के खोजी होकर अपनी बुरी चाल से फिरे, तो मैं स्वर्ग में से सुनकर उनका पाप क्षमा करूँगा और उनके देश को ज्यों का त्यों कर दूँगा (2 इतिहास 7:14)।

टूटे हुए व्यक्तित्व के प्रदर्शन से व्यापारिक विश्व में मसीही लोगों पर क्या प्रभाव होगा इस विषय में सोचें। संसार के लोगों ने इस अनुभव को नहीं पाया हैं। वे अपने समान लोगों के विरोध में सीना तानकर खड़े हो जाते हैं। परन्तु जो उनका सामना क्रोध से नहीं, परन्तु क्षमा और अंगीकार के माध्यम से करते हैं, जो प्रभु यीशु के अनुग्रह का परिचय कराते हैं, उनके सन्मुख वे निर्बल और निष्क्रिय सिद्ध होते हैं। यही अलौकिक जीवन व्यापार के वर्तमान झूठे और धोखादायक विश्व में प्रभु यीशु की गवाही ऊँचे स्वर में ऐलान करते हैं।

प्रभु, मुझे तोड़

कुछ वर्ष पूर्व मिशनरियों की एक प्रार्थना सभा में मैंने एक जवान विश्वासी को प्रार्थना करते हुए सुना, "प्रभु, मुझे तोड़।" इस प्रार्थना ने मुझे मानसिक रुप से हिलाकर रख दिया। उस समय तक मैंने अपने जीवन में इस तरह की प्रार्थना कभी नहीं की थी। परन्तु उस समय भी उस तरह की प्रार्थना करने के लिये मैं तैयार नहीं था। परन्तु उस जवान शिष्य के हृदय से निकले वे शब्द मेरे कानों में उण्ड़ेले गए और उस प्रार्थना ने मेरे जीवन में टूटे हुए व्यक्तित्व की प्रबल आवश्यकता के प्रति मुझे जागृत किया। मेरे मन में मैंने यह महसूस किया कि आत्मिक संसार में यह परम महत्वपूर्ण बात है। और अब यह प्रार्थना मेरे अभिलाषी हृदय की निरंतर पुकार बन गई:

प्रभु, मुझे तोड़!